इकाई–IV

भारत की विदेश नीति व संयुक्त राष्ट्र संघ

1. भारत की विदेश नीति की प्रमुख विशेषताएँ एवं गुट निरपेक्षता

(Characteristics of Indian Foreign Policy & Non-Alignment)

भारत की विदेश नीति
(Foreign Policy of India)

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व ही हमारी विदेश नीति ने साकार स्वरूप लेना प्रारम्भ कर लिया था। स्वतंत्र विदेश नीति का पं. नेहरु का संकल्प हमारे सामने था। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् विश्व का दो गुटों में बंटना व अन्य राष्ट्रों द्वारा अनुवृत्ति गुट बनाना जारी था। भारत ने इनसे पृथक् रीति–नीति का अनुसरण किया। हमारा यह भी संकल्प था कि हम विश्व में उपनिवेशवाद, रंग–भेद व साम्राज्यवाद का विरोध करेंगे। विदेश नीति का जो ताना–बाना हमने उस समय बुना उसकी प्रमुख विशेषताएँ ये है –

1. **शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व की नीति (Policy of Peaceful Coexistence) –**

   हमारी विदेश नीति सदैव शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व की रही हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि युद्धों ने मानवता को तहस–नहस किया है। के.एम.पणिक्कर के शब्दों में –''भारत को इस बात की बड़ी चिन्ता है कि उसकी प्रगति को तथा सामान्य रूप से मानव जाति की उन्नति को संकट में डालने वाला कोई युद्ध नहीं हो। इसी नीति पर चलते हुए हमने विश्व में अपनी भूमिकाएँ तय की है।''

   पड़ोसी राष्ट्रों के साथ हमारे रिश्ते भी इस नीति से प्रभावित हो रहे हैं। यद्यपि कई बार इसे हमारी दुर्बलता माना गया। 1956 का स्वेज नहर संकट, 1967 का अरब इजराइल युद्ध, 1960 का सिन्धु जल समझौता, 1965 का भारत पाक युद्ध, इससे पूर्व 1962 में चीन के साथ संघर्ष, 1971–72 में बांग्लादेश का निर्माण व पाक के टकराव के पलों में भी हमने इस नीति को कभी छोड़ा नहीं। शान्ति और सह अस्तित्व हमारी भारतीय संस्कृति के मूलमंत्र ''जीओ और जीने दो'' के आगामी चरण हैं, जो आज भी राष्ट्र की आतंरिक व विदेश नीति को दिशा देते है।

2. **उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद का विरोध (Anti Colonialism & Imperialism) –**

   उपनिवेशवाद व साम्राज्यवाद का दंश भारत भोग चुका है। विश्व के किसी भी हिस्से में, द्वितीय महायुद्ध के बाद विशेषकर हमारी स्वतंत्रता के पश्चात् भारत ने इसका विरोध किया है। 1956 में मिस्र पर हमला हो या खाड़ी में अमेरीकी हस्तक्षेप, हमने महाशक्तियों की प्रसारवादी नीति का विरोध किया है।

3. **रंगभेद का विरोध (Anti Apartheid)–** विश्व में नस्ल या मनुष्य के रंग के आधार पर भेदभाव का विरोध करना हमारी विदेश नीति की प्रमुख विशेषता रही है। नेल्सन मंडेला की आजादी व उनके सत्तारूढ़ होने से पूर्व रंगभेदी दक्षिण–अफ्रीकी सरकार से अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का विच्छेद हमारी इसी नीति को इंगित करता है।

4. **अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं को समर्थन (Supporter of International Institutions)–**

   हमारी विदेश नीति का यह आधार रहा है कि हमने अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं को खुलकर समर्थन दिया है। स्वतंत्रता से पूर्व ही हम संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना को समर्थन दे चुके थे। स्वतंत्रता के पश्चात् हमने इसकी सदस्यता स्वीकार कर इसके विभिन्न कार्यक्रमों व एजेन्सियों में बढ़ चढ़कर भागीदारी निभाई। संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रति हमारी प्रतिबद्धता अटूट है। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् में हमारी स्थाई सदस्यता का दावा व अन्तर्राष्ट्रीय मंचों का समर्थन हमारी विदेश नीति की सफलता का द्योतक है।

5. **पंचशील के सिद्धान्त पर आधारित (Based on Principles of Panchsheel)–**

   आचरण के 5 सिद्धान्तों पर आधारित पंचशील की हमारी विदेश नीति प्रारम्भ में पड़ोसी चीन के साथ तथा कालांतर में अन्य राष्ट्रों के साथ ही रही। ये सिद्धान्त है–

   1. एक दूसरे देश की प्रादेशिक अखंडता और सर्वोच्च सत्ता के लिए पारस्परिक सम्मान की भावना
   2. अनाक्रमण
   3. एक दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना।
   4. समानता
   5. शांतिपूर्ण सहअस्तित्व

6. **गुटनिरपेक्षता (Non-Alignment) –** हमारी विदेश नीति का गुटनिरेपेक्षता के सिद्धान्त से विशेष सम्बन्ध रहा है। गुटनिरपेक्षता आन्दोलन के प्रमुख भारत के नेहरु,

यूगोस्लाविया के टीटो और मिस्र के नासिर थे। गुटनिरपेक्षता से तात्पर्य अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व के किसी भी गुट के साथ द्विपक्षीय सम्बन्धों के आधार पर सैनिक समझौते में भाग न लेना है। इस नीति का अनुसरण करने वाले देश विश्व की गुटबाजी की राजनीति के विलग्न रहने को प्राथमिकता देते है, किन्तु विश्व शान्ति और सुरक्षा के मुद्दों पर संयुक्त राष्ट्रसंघ और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की भरपूर सहायता करने पर बल देते है। गुटनिरपेक्षता की नीति उदासीनता व तटस्थता की नीति नहीं। पं. जवाहर लाल नेहरु ने इस नीति के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा था कि यदि स्वतंत्रता का हनन और न्याय की हत्या होती अथवा कहीं आक्रमण होता है तो वहाँ हम न तो आज तटस्थ रह सकते हैं और न ही भविष्य में रहेंगे। गुटनिरपेक्ष आन्दोलन 1955 के बाडुंग सम्मेलन में अस्तित्व में आया था उसके पश्चात् 25 विकासशील देशों के नेताओं ने 1961 में बेलग्रेड सम्मेलन में मुलाकात की थी। भारत गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के संस्थापक सदस्यों में से एक है। भारत ने 1983 में नई दिल्ली में आयोजित सातवें गुट निरपेक्ष आन्दोलन के शिखर सम्मेलन की मेजबानी की।

17वें गुट निरपेक्ष आन्दोलन शिखर सम्मेलन का आयोजन 13 सितम्बर 2016 से 18 सितम्बर 2016 के बीच वेनेजुएला के मारगरीता शहर में सम्पन्न हुआ है। राजनीति वैज्ञानिकों का मत है कि गुट निरपेक्षता की नीति का जन्म शीतयुद्ध के समय विश्व के दो शक्ति केन्द्रो में विभाजन के कारण हुआ था। जिसमें एक का नेतृत्व संयुक्त राष्ट्र अमेरीका कर रहा था तो दूसरे का नेतृत्व पूर्व सोवियत संघ। सोवियत संघ के नेतृत्व वाले साम्यवादी धड़े के 1990 में विघटन के बाद विश्व में अमेरीका केन्द्रित एक ध्रुवीय व्यवस्था स्थापित हो चुकी है। उनके अनुसार वैश्वीकरण के युग में गुटनिरपेक्षता आन्दोलन अपनी परम्परागत महता खो चुका है और वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की मांगों के अनुरूप नहीं रहा है।

1.1 गुट निरपेक्षता का अर्थ (Meaning of Non- Alignment) –

इस नीति का अर्थ है कि विश्व के किसी भी गुट का साथ जिसका स्वरूप सैनिक हो, के साथ जुड़ाव न रखना। नाटो, सीटों व वारसा संगठनों जैसे सैनिक गठबंधनों में शामिल न होकर अलग रहना। यह ऐसी नीति है जो विश्व राजनीति में स्वतंत्र नीति के अनुगमन पर बल देती है। यह नीति सभी गम्भीर अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर निरपेक्ष, पूर्वाग्रह रहित, स्वतंत्र व वस्तुनिष्ठ रुख अपनाने की वकालत करती है। यह नीति तटस्थता की नीति नहीं है बल्कि विश्व राजनीति की जटिल गुटीय प्रभावशीलता से मुक्त एक स्वतंत्र नीति है। यह नीति अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के शान्तिपूर्वक व अहिंसक समाधान की पक्षधर है। यह नीति शीतयुद्ध के समय के दो शक्तिशाली धड़ों से दूर रहने पर बल देती थी। यह नीति अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का गुण दोष के आधार पर आकलन कर वस्तुनिष्ठ निर्णय करने की पक्षधर रही है। गुट निरपेक्षता की नीति विरोधी गुटों के मध्य संतुलन बनाये रखने पर बल देती है। यह अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की जटिलताओं से पृथक् रहने की नीति नहीं है बल्कि विश्व राजनीति में सार्थक योगदान देने वाली नीति है।

1.2 भारत की विदेश नीति में गुटनिरपेक्षता को अपनाने के कारण (Reasons for Adopting Non Alignment in Indian ForeignPolicy)–

1. भारत किसी एक गुट से जुड़कर विश्व में तनाव की स्थिति उत्पन्न करने का पक्षधर नहीं रहा है।
2. भारत अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में स्वतंत्र नीति (जो अन्य शक्ति के प्रभाव से मुक्त हो) के अनुसरण को अपने लिए अधिक उपयोगी मानता है।
3. भारत अपने आर्थिक विकास के लिए दोनों ही शक्तियों से बराबरी के सम्बन्ध बनाए रखने का पक्षधर रहा है।
4. गुटनिरपेक्षता की नीति भारत की सामाजिक, सामरिक, भौगोलिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक मांगों के अनुरूप थी।
5. भारत के प्रारम्भिक नेतृत्व की गुटनिरपेक्षता की नीति में अटूट श्रद्धा व विश्वास था।
6. गुट निरपेक्षता की नीति भारत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि व विविधतापूर्ण बहुलवादी संस्कृति के लिए अनुकूल थी।

1.3 वर्तमान संदर्भ में गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की प्रासंगिकता (Relevance of Non Alignment movement in Present Context)–

गुटनिरेपक्ष आन्दोलन ने अपने 50 वर्षो से अधिक के कार्यकाल में अनेक उपलब्धियाँ हासिल की है। इसकी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद की समाप्ति है जिसके परिणामस्वरूप एशिया व अफ्रीका के अनेक देश स्वतंत्रता प्राप्त कर सके। दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद की नीति की समाप्ति में भी इसका महत्त्वपूर्ण योगदान है। इसके अतिरिक्त इसने नवोदित राष्ट्रों के मध्य एकता व सहयोग बढ़ाने व विश्व मंच पर उनके दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने, गुटों से दूर रहकर संघर्ष के क्षेत्र को कम करने तथा विश्व शान्ति को प्रोत्साहित करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। 1991 में सोवियत संघ के विघटन एवं शीत युद्ध की समाप्ति के उपरान्त गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के औचित्य पर प्रश्नचिह्न लगने लगे।

वस्तुतः सच्चाई यह है कि गुट निरपेक्ष का तात्पर्य विदेश नीति की स्वतंत्रता से है तथा इसका उद्देश्य संप्रभु राष्ट्रों की समानता व उनकी संप्रभुता व अखण्डता को सुरक्षित रखना है। इस संदर्भ में इसका औचित्य स्वयंसिद्ध हो जाता है।

विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं व चुनौतियों मानवाधिकार, विश्व व्यापार, वार्ताएँ जलवायु परिवर्तन वार्ताएँ अथवा संयुक्त राष्ट्र संघ के सुधार के संदर्भ में विकासशील देशों का दृष्टिकोण प्रस्तुत करने हेतु एक प्रभावी मंच की आवश्यकता है। गुटनिरपेक्ष आन्दोलन इसी मंच के रूप में कार्य करता है। यद्यपि सोवियत संघ के विघटन के बाद शीतयुद्ध की समाप्ति हो गई है तथा द्विध्रुवीय व्यवस्था भी समाप्त हो गई हैं, लेकिन गरीब व कमजोर राष्ट्रों की सुरक्षा व संप्रभुता की चुनौतियाँ कम नहीं हुई है। अमेरीका के नेतृत्व में एकध्रुवीय व्यवस्था के लक्षण पनप रहे है। पश्चिमी देशों का सैनिक गुट नाटों और अधिक मजबूत हुआ है। गुट निरपेक्ष आन्दोलन ने अफ्रीका, एशिया व लैटिन अमेरीका के विकासशील देशों के मध्य सहयोग और एकता के मंच के रूप में कार्य किया है। आज भी इन देशों के मध्य आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक सहयोग की आवश्यकता है। इस सहयोग को दक्षिण–दक्षिण सहयोग के नाम से जाना जाता है। अतः गुट निरपेक्ष आन्दोलन दक्षिण दक्षिण सहयोग को एक मंच प्रस्तुत करता है। गुटनिरपेक्ष देशों के आज तक 17 शिखर सम्मेलन आयोजित किए जा चुके है। 17वां शिखर सम्मेलन वेनेजुएला के मारगरीता शहर में 17 – 18 सितम्बर 2016 को आयोजित हुआ इसमें ''विकास के लिए शान्ति संप्रभुता व समरसता '' को इस सम्मेलन का मुख्य विषय रखा गया। इससे पहले 16वां शिखर सम्मेलन अगस्त 2012 में ईरान की राजधानी तेहरान में सम्पन्न हुआ था। इस गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के शिखर सम्मेलन में पुनः एक बार राष्ट्रों की संप्रभुता तथा उनके विदेश नीति के स्वतंत्रता के मुदद् को उठाया गया था। आज भी विश्व की मुख्य चुनौतियों का सामना करने के लिए गुट निरपेक्ष आन्दोलन प्रभावशाली है। यह एक ऐसा मंच है जो विश्व के विकासशील राज्यों को एक समान भागीदारी प्रदान करता है तथा जो विश्व की प्रमुख चुनौतियाँ जैसे सुरक्षा के खतरे, पर्यावरण प्रदूषण, स्वास्थ्य समस्याएँ आदि का प्रभावी ढंग से सामना कर सके। विश्व व्यवस्था के अनेक अभिकरण ऐसे है, जिनके निर्णय निर्माण में विकासशील देशों की पर्याप्त भूमिका नहीं है। अतः विश्व की विभिन्न संस्थाओं में विकासशील देशों को अधिक प्रभावी प्रतिनिधित्व देने की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं पर गुट निरपेक्ष आन्दोलन के माध्यम से विशेष रूप से ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। गुटनिरपेक्ष आन्दोलन विश्व के विभिन्न देशों के मध्य सांस्कृतिक, सामाजिक व राजनीतिक मूल्यों के परस्पर आदान–प्रदान के लिए भी सार्थक है।

1.4 गुट निरेपक्षता और वर्तमान सरकार (Non-Alignment & Present Government) –

गुट निरपेक्ष आन्दोलन के प्रमुख संस्थापक देशों में भारत भी शामिल था एवं सिंगापुर से लेकर क्यूबा तक के विभिन्न परिवेश के देशों का इसका सदस्य होना इसे ओर भी अधिक प्रासंगिक बनाता है। भारत आतंकवाद पीड़ित देशों में सर्वाधिक प्रभावित देश है और आतंकवाद की लड़ाई में गुट निरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य देशों का समर्थन अपरिहार्य है। भारत को पाकिस्तान को अलग–थलग करने एवं आतंकवाद के मुदद् पर उसे घेरने के लिए भी गुट निरपेक्ष आन्दोलन एक उचित मंच प्रदान करता है।

भारत संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् का स्थायी सदस्य बनने के लिए कई वर्षों से प्रयत्नरत है और इसमें गुटनिरपेक्ष देशों के समर्थन की दरकार निरन्तर बनी हुई है। गुट निरपेक्ष देशों का समर्थन निश्चित रूप से उसकी इस मांग को सबल बनाती है। भारत जिस तरह की विदेश नीति का अनुसरण कर रहा है उसको देखते हुए गुट निरपेक्ष नीति का आज भी उतना ही महत्त्व है जितना कि इस संगठन के स्थापना के समय था। आज की विदेश नीति की व्यवस्थता को देखते हुए हमें इस संगठन की सदस्यता अर्थपूर्ण न लगे, परन्तु इस परिवर्तनशील दौर में विश्व समुदाय को साथ–साथ चलना अपने आप में एक बड़ा कीर्तिमान है।

1.5 भारतीय विदेश नीति के नवीन आयाम (New Dimensions of India's Foreign Policy)–

भारत ने नब्बे के दशक से आर्थिक क्षेत्र में जो उदारवादी सुधार शुरू किए हैं वे ही आज भारत की विदेश नीति का मुख्य आधार बने हुए हैं।

भारत एक तेजी से उभरती अर्थव्यवस्था है जिसकी गति व क्षमता का एक मुख्य पक्ष विदेश नीति भी है। इसकी एक विशेषता निरन्तरता है और इसमें किसी भी समय पर आमूलचूल परिवर्तन देखने को नहीं मिलते है। मात्र सरकार बदलने से भारत की विदेश नीति की व्यापक, रूपरेखा या ढाँचे में परिवर्तन नहीं आता। भारत की विदेश नीति का मुख्य उद्देश्य एक सुरक्षित और स्थिर क्षेत्रीय पर्यावरण की स्थापना करना है ताकि भारत का आर्थिक विकास अनवरत जारी रहे।

वर्तमान सरकार की विदेश नीति ''वसुधैव कुटुम्बकम'' की परम्परा के अनुरूप विदेश नीति के अनुगमन पर बल देती है। भारत अपने सहयोगियों का संजाल विकसित करना चाहता है। भारत की मौजूदा विदेश नीति 'आतंकवाद' के प्रति 'शून्य सहयता' (Zero Tolerance) जीरो टोलरेन्स की नीति का अनुसरण करेगी। वर्तमान

सरकार ने भारतीय विदेश नीति को सक्रिय बनाने की चेष्टा की है। वर्तमान सरकार एशिया व विश्व में बढ़ती हुई चीन की शक्ति से सचेष्ट है वह भारत को एक शक्तिशाली राष्ट्र बनाने के लिए अर्थ व्यवस्था से भ्रष्टाचार, लालफीता शाही और अवसंरचनात्मक सुधार पर विशेष बल देती है।

1.6 नवीन विदेश नीति का सूत्रपात (Beginning of New Chapter in Foreign Policy) –

विगत कुछ वर्षों में भारत की वैश्विक छवि तथा भारत की राजनीतिक पहुंच, प्रयास, कल्पना और गति के साथ एक नए रूप में बदल गई है। इसके साथ तीन बिन्दु जुड़े है व्यापार, संस्कृति और सम्पर्क। इसको रूपान्तरकारी कूटनीति की संज्ञा दी जा सकती है। इन तीन वर्षो में भारत ने अनेक बाधाओं को पार किया है और अनेक उपलब्धियों को अर्जित किया है। सबसे बड़ी उपलब्धि जुलाई 2015 में वर्षों से भारत – बांग्लादेश के मध्य विवाद का मुद्दा रहे 162 भू–गलियारों (Enclaves) के हस्तान्तरण से सम्बन्धित माना जा सकता है। इस समझौते से भारत बांग्लादेश के सम्बन्धों में आई कटुता को दूर किया जा सकेगा।

1.7 पांच मूल सिद्धान्त (Five Basic Foundations)–

निरन्तर वार्ता, आर्थिक समृद्धि को प्रोत्साहन, भारत की प्रतिष्ठा और सम्मान में वृद्धि, राष्ट्रीय सुरक्षा का समर्थन तथा भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की मान्यताओं को प्रोत्साहन, ऐसे पांच मूल सिद्धान्त है जो वर्तमान सरकार की विदेश नीति को प्रेरित करते हैं।

1.8 पड़ोस पहले की नीति (Neighbourhood First) –

प्रधानमंत्री बनने के बाद भारत की विदेश नीति को नवीन दिशा प्रदान करने के लिए पड़ोस पहले की नीति अपनाते हुए वर्तमान प्रधानमंत्री जी ने सभी पड़ोसी देशों की यात्रा कर भारतीय विदेश नीति में एक नये अध्याय का सूत्रपात किया। यह भारतीय विदेश नीति के बुनियादी बदलाव को प्रतिबम्बित करता है। वर्तमान प्रधानमंत्री जी की स्वतंत्र रूपान्तरकारी कूटनीति की शुरुआत देश के नजदीकी पड़ौसियों के साथ सम्पर्क से हुई। मॉरिशस सहित सभी सार्क देशों के नेताओं को सरकार के शपथग्रहण समारोह में बुलाकर भारत ने अपने पड़ोसी देशों के साथ सघन सम्पर्क स्थापित करने का एक अभूतपूर्व उदाहरण प्रस्तुत किया। ऐसे पड़ोसी देश जिनके भविष्य और सपने भारत देश के साथ गहराई से जुड़े है। इसी कड़ी में भारत की संसद द्वारा बाग्लादेश के साथ सीमा करार की पुष्टि हुई। नेपाल के साथ पनबिजली परियोजनाओं के समझौते पर हस्ताक्षर हुए, भारत–भूटानी 600 मेगावॉट खोलोंगचु पनबिजली परियोजना की आधारशिला रखी गई। अफगानिस्तान में हमारी प्रमुख परियोजनाओं को निश्चित समयावधि में पूरा किया गया व 24 वर्ष बाद कोलम्बो जाफना रेल सम्पर्क को दोबारा भारतीय सहयोग से खोला गया। सच्ची मित्रता की भावना से भारत ने अपने संकटग्रस्त पड़ौसियों को तत्परता से सहायता दी। जब मालदीव गंभीर संकट से घिर गया था तब एक सुचारु रूप से संचालित कार्यक्रम 'ऑपरेशन नीर' के तहत पानी के जहाज और हवाई जहाज के जरिए वहाँ जल पहुँचाने वाला पहला देश था। नेपाल में गंभीर भूकम्प का जब झटका आया तो भारत पुनः अपने संसाधनों और मशीनरी के साथ संकटग्रस्त मित्र के कष्ट का निवारण करने वाला पहला देश था। इस प्रकार भारत की पड़ोसी देशों के प्रति कूटनीति की शक्ति, कौशल, ऊर्जा और करुणा समान रूप से प्रदर्शित हुई है। पहले जिसे 'लुक ईस्ट' (Look East) नीति के नाम से जाना जाता था वर्तमान प्रधानमंत्री जी के कार्यकाल में विदेश नीति में आई सक्रियता के कारण अब इसे 'एक्ट ईस्ट' (Act East) नीति के रूप में जाना जाता है। इस नीति के अन्तर्गत आर्थिक रूप से गतिशील क्षेत्र में अधिक सघन सम्पर्क हुआ है। पूर्व में सक्रियता की यह नीति भारत के प्रधानमंत्री सहित अन्य पदाधिकारियों की यात्राओं में प्रदर्शित हुई है। प्रधानमंत्री ने जापान, म्यांमार, ऑस्ट्रेलिया, दक्षिण कोरिया, सिंगापुर और चीन की यात्रा की जब कि विदेश मंत्री सुषमा स्वराज ने सिंगापुर, वियतनाम, म्यांमार, दक्षिण कोरिया, चीन और इण्डोनिशिया की यात्रा की।

1.9 भारत व मध्यपूर्व (India & Middle East)–

भारत का पश्चिमी एशिया के देशों के साथ ऐतिहासिक जुड़ाव रहा है। भारत में आतंकवाद प्रभाव वही से आया था। आज भारत सर्वाधिक मुस्लिम आबादी वाला देश है। धर्मान्धता व कट्टरवाद भी मध्यपूर्व के दशों से अफगानिस्तान व पाकिस्तान के माध्यम से भारत में प्रसारित हुआ है। वैश्वीकरण के प्रौद्योगिकी प्रधान युग में मध्यपूर्व में अभी भी मध्यकालीन अवधारणा का बोलबाला है जो वहां के नागरिकों को मध्यकालीन मॉडल पर चलने को प्रेरित करती है। मध्यपूर्व के देशों में एक ओर सऊदी अरब और ईराक आदि देशों में सुन्नी विचारधारा का वर्चस्व है वहीं ईरान में शिया विचारधारा का वर्चस्व है। खाड़ी के लगभग सभी देश तेल का उत्पादन करते हैं और इसी कारण उनकी अर्थव्यवस्था तेल के कारण सुदृढ़ है। परन्तु भारत की ऊर्जा आवश्यकता की पूर्ति भी मध्यपूर्व के देशों पर निर्भर है। जिनमें ईरान सबसे महत्त्वपूर्ण है। ईरान और

भारत के आपसी सम्बन्ध भी सौहादपूर्ण है किन्तु अमेरीका व ईरान के आपसी सम्बन्धों की कड़वाहट से भारत के सम्बन्ध भी प्रभावित हुए है। भारत ने ईरान के चाबाहार बंदरगाह में भारी निवेश किया है।

एक अन्य महत्त्वपूर्ण पश्चिमी एशियाई देश सऊदी अरब पाकिस्तान द्वारा भारत के विरुद्ध फैलाये गए इस्लामी आतंकवाद में उसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से साझेदार है भारत दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा तेल आयातक देश है और वह तेल की आवश्यकता पूर्ति के लिए खाड़ी देशों पर आश्रित है। यह उसकी कूटनीतिक व्यवस्था है। एक ओर भारत के लगभग 70 लाख कामगार खाड़ी देशों ने रोजगार प्राप्त कर रहे है। जिसका सकारात्मक पक्ष यह है कि वे लगभग 35 अरब डॉलर का वित्तीय विप्रेषण भारत में करते हैं।

नकारात्मक पक्ष यह है कि वे धन के साथ 'वहाबी विचारधारा' को भी भारत में निर्यात कर रहे है जिससे भारत की एकता और अखंडत को खतरा उत्पन्न हो गया है। ईराक और सीरिया में सक्रिय आई.एस.आई.एस (Islamic State of Iraq & Syria) के बढ़ते हुए प्रभाव से अन्य देशों की भाँति भारत भी चिन्तित है। पिछले दो वर्षों में भारत में इस्लामी राज्य की विचारधारा से प्रभावित होकर कई युवक इस संगठन के प्रति आकर्षित हुए है जो भारत के हितों के प्रतिकूल है। मध्यपूर्व के गैर मुस्लिम देश इजराइल के साथ भारत के अच्छे सम्बन्ध है।

भारत व इजराइल में आबादी के अनुसार कोई साम्य नहीं है। जहाँ भारत 1.3 अरब जनसंख्या वाला विशाल देश है वहीं इजराइल की कुल आबादी 80 लाख ही है। इस असमानता के बावजूद दोनों देश कई महत्त्वपूर्ण समान गुण रखते हैं। दोनों देशों में प्राचीन धर्मों का प्रधान रूप से अस्तित्व है जो धर्म परिवर्तन करने में विश्वास नहीं रखते। दोनों लोकतंत्र व धर्मनिरपेक्षता में विश्वास रखते हैं व आतंकवाद से उत्पीड़ित है।

दोनों ही देशों की अमेरीका से निकटता है और दोनों ही देशों में बहुतायत में मुस्लिम अल्पसंख्यक समुदाय निवास करता है। दोनों ही देशों के लिए आतंकवाद उनके अस्तित्व को गंभीर चुनौती प्रदान करने वाला है। दोनों ही देशों के अपने –अपने हित है जो पारस्परिक निर्भरता पर बल देते है। विशेष तौर पर वे आपस में खुफिया सूचनाएँ आदान–प्रदान कर सकते हैं। जल प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, सुरक्षा और उच्च तकनीकी नवाचार व कृषि में इजराइल भारत की मदद कर सकता है। वहीं भारत इजराइल के उत्पादों को बेचने के लिए एक बड़ा बाजार प्रदान कर सकता है।

हाल ही में भारत ने इजराइल से लगभग तीन अरब अमेरीकी डॉलर की कीमत का सैन्य हार्डवेयर खरीदा है। दोनों ही देशों की सेनाओं में प्रशिक्षण व अन्य क्षेत्रों में निरन्तर सहयोग बन रहा है। भारत के लिए मध्यपूर्व की विदेश नीति सबसे बड़ी चुनौती पूर्ण है क्योंकि हम एक तरफ मध्यपूर्व के देशों के साथ अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अच्छे सम्बन्ध बनाए रखना जरूरी हैं साथ ही, देशों की राजनीतिक अस्थिरता व वहाँ की कट्टरवादी विचारधारा के भारत पर पड़ने वाले प्रभावों से सावधान रहने की आवश्यकता है।

1.10 भारत और रुस (India & Russia)–

भारत और रुस दोनों परम्परागत मित्र रहे है। परन्तु 1991 में पूर्व सोवियत संघ के विघटन व भारत द्वारा समाजवादी अर्थव्यवस्था के स्थान पर बाजारोन्मुखी वैश्वीकरण की अर्थव्यवस्था को अपनाने से दोनों देशों के परम्परागत सम्बन्धों में पुरानी प्रगाढता में कमी आई। भारत आज भी अपने अधिकांश सैन्य साजो सामान व उपकरणों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए रुस पर निर्भर करता है। किन्तु बदली हुई राजनीतिक परिस्थितियों में भारत के लिए जर्मनी एवं फ्राँस जैसे अन्य यूरोपीय देशों एवं संयुक्त राज्य अमेरीका से निकट सम्बन्ध स्थापित करना अपरिहार्य हो गया है।

1.11 भारत और अमेरीका एवं यूरोपीय देश (India, US & European States) –

भारत की वर्तमान विदेश नीति तात्कालिकता और व्यावहारिकता पर आधारित है। वर्तमान सरकार को भारत की सुरक्षा जरूरतों का एवं एशिया में बदलती नवीनतम राजनीति समीकरणों का पूर्ण अभिज्ञान है।

हमारी विदेश नीति में यह परिवर्तन मुख्यतः चीन की नवीन प्रखरतापूर्ण नीति की प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ है। ऐसे समय में जब विश्व की प्रथम शक्ति, संयुक्त राज्य अमेरीका ने अपनी पुनः संतुलन की विदेश नीति के पूरे पत्ते नहीं खोले है। जहाँ पाकिस्तान की नीति सदैव भारत केन्द्रित रही है, वही भारत की विदेश नीति विश्व उन्मुख होने के कारण अधिक व्यापक है व किसी एक देश पर आधारित नहीं है। भारत पाकिस्तान को आतंकवाद के मुद्दे पर अलग–थलग करने मे काफी हद तक सफल रहा है। वर्तमान में भारत की विदेश नीति रूपान्तरकारी चरण में है।

महत्त्वपूर्ण प्रश्न

- विश्व के अन्य राष्ट्रों के साथ सम्बन्धों का निर्धारण, विदेश नीति का हिस्सा है।
- भारतीय विदेश नीति की विशेषता है –

- शान्तिपूर्ण सह– अस्तित्व की नीति।
- उपनिवेशवाद व साम्राज्यवाद का विरोध।
- रंगभेद का विरोध।
- अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं को समर्थन ।
- पंचशील के सिद्धान्त।
- गुट निरपेक्षता।

- गुट निरपेक्षता का अर्थ – विश्व के किसी भी शक्ति गुट के साथ न जुड़कर स्वतंत्र रीति–नीति का अनुसरण करना तथा सत्य का साथ देना। गुटनिरेपक्षता या असंलग्नता की नीति है।
- सोवियत संघ के विघटन के पश्चात दो ध्रुवों में शक्ति संतुलन बिगड़ने के उपरान्त आज गुट निरपेक्षता आन्दोलन की प्रासंगिकता बहु–ध्रुवीकरण के मंच के रूप में रेखांकित हुई है।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. सह–अस्तित्व का भावार्थ है –
   (अ) जीओ और जीने दो।
   (ब) साथ– साथ संघर्ष करो।
   (स) सबके साथ राष्ट्र की सीमाएँ मिला दो।
   (द) अपना अस्तित्व बनाए रखो। ( )
2. भारतीय विदेश नीति के उद्देश्य से मेल नहीं खाने वाला कथन है –
   (अ) उपनिवेशवाद का विरोध
   (ब) साम्राज्यवाद का प्रसार
   (स) साम्राज्यवाद का विरोध
   (द) संयुक्त राष्ट्र संघ में विश्वास ( )
3. ' शील ' शब्द का भावार्थ है –
   (अ) मोहर (ब) लिफाफा बंद करना
   (स) आचरण (द) शिलालेख ( )
4. भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ के किस अंग की स्थाई सदस्यता की मांग कर रखी है –
   (अ) महासभा (ब) न्यास परिषद्
   (स) सुरक्षा परिषद् (द) अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय ( )
5. गुट निरपेक्ष आन्दोलन के संस्थापक थे –
   (अ) नेहरु (ब) नासिर
   (स) टीटो (द) ये सभी ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. भारतीय विदेश नीति की दो विशेषताएँ बताइए ।
2. पंचशील के दो सिद्धान्त कौन से है ?
3. गुट निरपेक्ष आन्दोलन के संस्थापक सदस्य राष्ट्र कौनसे है ?
4. बांग्लादेश को स्वतंत्रता कब मिली ?
5. यू.एन.ओ का पूरा नाम बताइए ।

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. पंचशील के सिद्धान्तों पर टिप्पणी लिखिए ।
2. उपनिवेशवाद क्या है ?
3. रंगभेद से आप क्या समझते हैं ?
4. गुट निरपेक्षता का अर्थ बताइए ?
5. सह– अस्तित्व के सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारत की विदेश नीति की प्रमुख विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।
2. ' शक्ति गुटों के विध्रुवीकरण के पश्चात् गुटनिरपेक्षता की नीति अप्रासंगिक होती जा रही है। ' इस कथन के आलोक में गुटनिरपेक्षता की नीति का विवेचन कीजिए।

बहुचयनात्मक प्रश्नों के उत्तर

1. अ 2. ब 3. स 4. स
5. द

2. संयुक्त राष्ट्र संघ – संगठन एवम् विश्व शान्ति में योगदान
(United Nations Organisation - Contribution Towards World Peace & Security)

संयुक्त राष्ट्र संघ को आज के विश्व का प्रभावशाली अन्तर्राष्ट्रीय मंच कहा जा सकता है। आशावादी लोगों ने तो संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के समय इसकी आत्मा में विश्व सरकार के दर्शन किए थे, लेकिन यह कोरा अतिवाद ही सिद्ध हुआ। संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वितीय महासचिव रहे डेग हेमरसोल्ड ने इस सत्य को स्वीकार करने में कोताही नहीं बरती और कहा कि "संयुक्त राष्ट्र संघ" का गठन मानवता को स्वर्ग तक पहुँचाने के लिए नहीं बल्कि उसे नर्क से बचाने के लिए हुआ है।"

स्पष्ट है कि प्रथम विश्व युद्ध की विभिषिका से झुलसा विश्व आगत को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से राष्ट्र संघ के गठन को उद्यत हुआ था। किन्तु द्वितीय विश्व युद्ध के भीषण नरसंहार ने अवगत करा दिया कि राष्ट्र संघ एक अधूरा प्रयास था, जो द्वितीय विश्व युद्ध को नहीं रोक सका। तनावपूर्ण सम्बन्धों, विजेता और पराजित राष्ट्रों की परछाइयों में पुनः प्रयास हुए और संयुक्त राष्ट्र संघ के रूप में एक नया विश्व संगठन उदित हुआ। ब्रिटेन के पूर्व प्रधानमन्त्री चर्चिल ने चुटकी लेते हुए बताया कि हथियारों की लड़ाई से बेहतर है जुबानी जंग। यह बेहतर होगा कि एक ऐसा विश्व मंच बने जहाँ दुनिया के सारे देश एकत्रित हों और एक–दूसरे का सिर खाएं न कि सिर कलम करें।

संयुक्त राष्ट्र संघ के सृजन के बाद यद्यपि विश्व पटल पर भीषण युद्धों का संहारक नजारा लगातार देखने को मिला है, लेकिन युद्धों से इतर मसलों में संयुक्त राष्ट्र संघ ने प्रभावी मंच का दर्जा अवश्य प्राप्त कर लिया है। इसलिए अनेक कमजोरियों के बावजूद यह विश्व संस्था आज भी प्रासंगिक है।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति बनाए रखने तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग स्थापित करने के लिए व्यापक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन की आवश्यकता महसूस की गई। संगठन की धारणा के बारे में विभिन्न विचार थे। एक विचार के अनुसार, नया संगठन राष्ट्र संघ के समान ही होना चाहिए। दूसरा विचार था कि संगठन का स्वरूप युद्ध के बाद की अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति तथा अनुभवों से निश्चित होना चाहिए। यही विचार अन्त में स्वीकार किया गया।

संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना विश्व के पाँच प्रमुख राष्ट्र – अमरीका, रूस, चीन, फ्रांस तथा ब्रिटेन द्वारा समर्थन करने के बाद 24 अक्टूबर, 1945 को हुई थी। इस दिवस को स्थाई रूप से "संयुक्त राष्ट्र दिवस" कहा जाता है। संयुक्त राष्ट्र की महासभा की पहली बैठक 10 जून, 1946 को लंदन में हुई, जहाँ केवल तीन महिने पहले राष्ट्र संघ को समाप्त करने के लिए राष्ट्र संघ की असैम्बली की आखिरी बैठक हुई थी। संयुक्त राष्ट्र के चार्टर में 111 अनुच्छेद हैं, जिनमें इसके संगठन, शक्तियाँ तथा कार्यों का उल्लेख किया गया है।

1. संयुक्त राष्ट्र के लक्ष्य (Objective of UNO) –

संयुक्त राष्ट्र की प्रस्तावना में इसके उद्देश्य इस प्रकार उल्लेखित हैं –

- विश्व को युद्ध की विभिषिका से बचाना।
- मानव के मूल अधिकारों पुरूष, स्त्री तथा छोटे–बड़े राष्ट्रों सभी के लिए समान अधिकार स्थापित करना।
- परस्पर राष्ट्रों की होने वाली संधियों द्वारा लगाए बन्धनों के प्रति आदर तथा न्याय बनाए रखना।
- सभी की सामाजिक उन्नति तथा लोगों का बेहतर जीवन स्तर प्रदान करना।

2. संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य (Aims of UNO) –

संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के पहले अध्याय के पहले अनुच्छेद में संयुक्त राष्ट्र के निम्नलिखित उद्देश्य बताए गये हैं –

- अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवम् सुरक्षा बनाए रखना।
- आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा मानवीय, किसी भी प्रकार की अन्तर्राष्ट्रीय समस्या को सुलझाना।
- समान अधिकारों के लिए आदर एवम् मित्रतापूर्ण सम्बन्ध कायम करना।
- उपर्युक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कार्य को सुव्यवस्थित करने का केन्द्र बनना।

3. संयुक्त राष्ट्र के सिद्धान्त (Principles of UNO)–

संयुक्त राष्ट संघ एवम् इसके सदस्यों को निम्न काम करना होता है –

- सभी सदस्यों की प्रभुसत्ता का सम्मान।
- सदस्यों को चार्टर के अनुसार लगाए गए प्रतिबन्धों का अपनी इच्छा के अनुसार पालन करना होता है।
- जो राज्य इसके सदस्य नहीं है वे भी संयुक्त राष्ट्र संघ के सिद्धान्तों के अनुसार कार्य करें।
- झगड़ों का निपटारा शान्तिपूर्वक करेंगे।

- राज्यों की भू–अखण्डता के विरुद्ध धमकी या बल प्रयोग से परहेज पर बल।
- सभी सदस्य संयुक्त राष्ट्र संघ को हर प्रकार से सहायता देंगे।
- संयुक्त राष्ट्र संघ किसी भी राज्य के घरेलू मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा।

4. **संयुक्त राष्ट्र की सदस्यता (Membership of UNO)–** संयुक्त राष्ट्र के दो प्रकार के सदस्य हैं –

- वे सदस्य जो प्रारम्भ में ही संयुक्त राष्ट्र में शामिल हो गए थे तथा जिन्होंने सान–फ्रांसिस्को सम्मेलन में भाग लिया था, संयुक्त राष्ट्र के मूलतः 51 सदस्य थे।
- वे सदस्य जो संयुक्त राष्ट्र संघ में बाद में शामिल हुए।

इस प्रकार वे सभी शान्तिप्रिय राज्य जो वर्तमान चार्टर में दिए गये दायित्वों तथा नैतिक बन्धनों को मानते हैं – संयुक्त राष्ट्र संघ में शामिल हो सकते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ में किसी भी देश को सदस्यता सुरक्षा परिषद् की सिफारिश पर महासभा द्वारा दी जाती है।

यदि कोई राज्य संयुक्त राष्ट्र के निर्देशों का बार–बार उल्लंघन करता है तो उसे सुरक्षा परिषद् की सिफारिश पर उसे महासभा द्वारा निकाला भी जा सकता है।

वर्तमान में संयुक्त राष्ट्र के कुल 193 सदस्य देश है। 193 वां सदस्य दक्षिण सूडान 2011 में बना।

2.1 संयुक्त राष्ट्र की महासभा (UN General Assembly) –

महासभा संयुक्त राष्ट्र संघ की वह संस्था है जिसे 'सारे विश्व की नगर बैठक' का नाम दिया जा सकता है। महासभा में संयुक्त राष्ट्र के सभी छोटे–बड़े सदस्यों के विचारों में सुना जाता है। संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य महासभा के सदस्य होते हैं। कोई भी सदस्य राष्ट्र महासभा में 5 से अधिक प्रतिनिधि नहीं भेज सकता और प्रत्येक राज्य का महासभा मे केवल एक ही मत होता है। इसे ही संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा कहा जाता है। वास्तव में, यह महासभा कोई भी समस्या रखने तथा अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने वाला एक अन्तर्राष्ट्रीय मंच है।

2.2 महासभा की शक्तियाँ एवम् कार्य (Powers & Functions of General Assembly) –

महासभा के कार्य तथा कार्यक्षेत्र बड़ा विशाल स्वरूप वाला एवं बड़ा विविध है। उन्हें पाँच श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है–

1. अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति व सुरक्षा से सम्बन्धित मामलों पर विचार–विमर्श
2. निरीक्षण कार्य
3. बजट पास करना
4. चुनाव सम्बन्धी कार्य
5. UNO चार्टर में संशोधन

2.3 महासभा का संगठन (Organisation of General Assembly) –

महासभा संयुक्त राष्ट्र संघ की शीर्ष संस्था है तथा इसके अपने ही नियम तथा प्रक्रियाएं हैं। यह एक ऐसा अंग है जहाँ न तो मेजबान होते हैं तथा न मेहमान।

महासभा एक वर्ष के लिए अपना सभापति चुनती है। वह अपनी व्यक्तिगत योग्यता के आधार पर चुना जाता है। उसे गोपनीय मत द्वारा चुना जाता है। बैल्जियम के मि. पॉल स्पूक महासभा के प्रथम सभापति थे तथा उन्होंने 10 जनवरी, 1946 को महासभा की प्रथम बैठक की अध्यक्षता की थी। सामान्यतः अध्यक्ष किसी छोटे राष्ट्र से ही लिया जाता है। अध्यक्ष की सहायता के लिए महासभा में चीफ डि–कैबिनेट होता है। यह व्यक्ति महासभा के अफसरों का अवर सचिव होता है। महासभा के 17 उपाध्यक्ष होते हैं, जो विभिन्न क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं। 17 उपाध्यक्षों तथा 7 स्थाई समितियों के सभापतियों को मिला कर एक महासमिति बनी होती है।

2.4 महासभा के सत्र (Sessions of General Assembly) –

महासभा की बैठक सितम्बर के तीसरे मंगलवार को नियमित रूप से होती है। सुरक्षा परिषद् के महासभा या संयुक्त राष्ट्र के बहुमत सदस्यों की प्रार्थना पर इसका विशेष सत्र भी बुलाया जा सकता है। महासभा का सभापति यद्यपि एक वर्ष के लिए चुना जाता है किन्तु यदि विशेष सत्र बुलाया गया है तो फिर हर सत्र के लिए अपना अध्यक्ष चुनती है।

सन् 1950 में स्थापित एक विशेष प्रक्रिया के अन्तर्गत यदि सुरक्षा परिषद् में विटो के प्रयोग से शान्ति की पुनर्स्थापना में रूकावट पैदा होती है तब 24 घण्टे में महासभा की विशेष बैठक हो सकती है तथा विश्व शान्ति के लिए उपयुक्त निर्णय ले सकती है, जिसे सुरक्षा परिषद् भी मानने के लिए बाध्य होती है।

2.5 महासभा का मूल्याँकन (Appreciation of General Assembly) –

महासभा की भूमिका का मूल्याँकन करते समय स्टार्क ने कहा था कि "अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवम् सुरक्षा के प्रश्नों पर सभा व्यावहारिक रूप से मुख्य स्वरूप ग्रहण करने के योग्य हो गई है, यह सचमुच विलक्षण है"। सन् 1950 में पारित शान्ति के लिए संगठन का प्रस्ताव को अपनाने के बाद महासभा की शक्तियों एवम् भूमिका में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुए हैं। इस

प्रस्ताव ने महासभा को संयुक्त राष्ट्र की सामूहिक सुरक्षा का संरक्षक बना दिया है। इस प्रस्ताव में लिखा गया है कि यदि सुरक्षा परिषद् अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति को खतरा होने, शान्ति भंग होने तथा आक्रामण जैसी किसी भी स्थिति में अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवम् सुरक्षा बनाए रखने में असफल रहती है तो महासभा अपने सदस्यों से उचित सिफारिश करने के लिए मामले को एकदम हाथ में ले लेगी, ताकि वे सामूहिक प्रयत्न कर सकें। इस प्रकार "शान्ति के लिए संगठित प्रस्ताव" के परिणामस्वरूप, महासभा की स्थिति पर्याप्त सुदृढ़ हुई है। परन्तु यह केवल सिद्धान्त रूप में ही दिखाई देता है, वास्तविक व्यवहार में महासभा की "शान्ति के लिए संगठित प्रस्ताव" के अन्तर्गत कार्य करते हुए 2/3 बहुमत से मुश्किल से ही प्रस्ताव पारित हुए हैं। लेकिन निश्चय ही महासभा कि यही शक्ति उसे एक असाधारण दर्जा अवश्य ही देती है।

सुरक्षा परिषद्
(Security Council)

सुरक्षा परिषद् संयुक्त राष्ट्र की कार्यकारिणी समिति है जिसके कन्धे पर अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवम् सुरक्षा को बनाए रखने का उत्तरदायित्व है। सुरक्षा परिषद् पर ही संयुक्त राष्ट्र संघ की सफलता एवम् असफलता का अन्तिम उत्तरदायित्व है क्योंकि यह ही महासभा के निर्णयों को तथा संयुक्त राष्ट्र के चार्टर को लागू करने से सम्बन्ध रखती है। यदि महासभा निर्देशी अंग है तो सुरक्षा परिषद् राष्ट्र संघ का निर्णय क्रियान्वयन विभाग है। जी.जे. मैंगॉन ने ठीक ही कहा है, "अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध को रोकने के लिए न तो सारे विश्व में, न ही इतिहास में कहीं भी इस तरह का शक्तिशाली अंग मिलता है। बाद के वर्षों में अनेक बार सुरक्षा परिषद् ने अपनी उपयोगिता भी सिद्ध की है।

2.6 गठन (Composition)–

सुरक्षा परिषद् में संयुक्त राष्ट्र के 15 सदस्य हैं: चीन, फ्रांस, अमरीका, रूस, इंग्लैण्ड पाँच स्थाई सदस्यों के रूप में तथा 10 महासभा द्वारा दो वर्ष के लिए चुने गए अस्थाई सदस्य। सुरक्षा समिति के सदस्य चुनते समय महासभा की भौगोलिक परिस्थितियों को ध्यान में रखना पड़ता है। इससे यह निश्चित हो जाता है कि सुरक्षा समिति में सभी क्षेत्रों को विश्वव्यापी प्रतिनिधित्व मिल गया है। सुरक्षा परिषद में सदस्यता प्रदान करते समय महासभा अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति तथा सुरक्षा में उस राष्ट्र के योगदान को भी ध्यान में रखती है।

2.7 शक्तियाँ एवम् कार्य
(Powers & Functions)–

संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् विश्व शान्ति एवम् सुरक्षा की सर्वोच्च संरक्षक है। इसे विश्व शान्ति एवम् सुरक्षा बनाए रखने का विशेष उत्तरदायित्व सौंपा गया है। यह संयुक्त राष्ट्र के सिद्धान्तों एवम् उद्देश्यों से भी बंधी है, इसलिए यह अपनी इच्छानुसार कार्य नहीं कर सकती है। इसके सदस्य, "वर्तमान चार्टर के अनुसार सुरक्षा समिति के निर्णयों को स्वीकार करने तथा लागू करने की स्वीकृति देते हैं।"

1. अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति व सुरक्षा से सम्बन्धित निर्णय लेने की शक्तियाँ
2. अपने निर्णयों के निशस्त्र क्रियान्वयन की शक्तियाँ
3. नए सदस्य, महासचिव व अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीश के चुनाव की शक्तियाँ
4. विवादों का शान्तिपूर्ण निपटारा

2.8 आलोचनात्मक मूल्यांकन
(Critical Evaluation) –

सुरक्षा परिषद् अपनी विस्तृत शक्तियों के आधार पर संयुक्त राष्ट्र संघ का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तथा अतिसम्वेदनशील अंग माना गया है, किन्तु 1950 के बाद यह सामान्यतः इस आधार पर आलोचना का केन्द्र बन गई कि संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अन्तर्गत जिस भूमिका को निभाने की जिम्मेदारी इसके कन्धों पर थी, उसे वह पूरी तरह निभा नहीं पाया। पामर तथा पर्किन्स के अनुसार, "सुरक्षा परिषद् की संयुक्त राष्ट्र की केन्द्रीय एजेन्सी के रूप में कल्पना की गई थी, परन्तु यह अपनी अपेक्षित भूमिका नहीं निभा पाई।"

अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय
(International Court of Justice)

चार्टर के अनुच्छेद 92 में कहा गया है कि अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय संयुक्त राष्ट्र का मुख्य अंग है। जिसका मुख्यालय हेग में है। संयुक्त राष्ट्र के सदस्यों को पूरी आजादी देता है कि वे अपने झगड़ों का निपटारा न्यायालय के अतिरिक्त दूसरी अदालतों में कर सकते हैं। इसके लिए उन्हें एक समझौता करना पड़ेगा। संयुक्त राष्ट्र के सदस्य अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के उन विषय पर निर्णयों को, जिनमें वे स्वयं भी शामिल होते हैं, मानने के लिए प्रतिबद्ध होते हैं।

2.9 संरचना (Structure)–

संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य वस्तुतः न्यायालय के सदस्य होते हैं। सुरक्षा परिषद की सिफारिशों पर कार्यरत महासभा द्वारा प्रत्येक विषय पर निर्धारित शर्तों के अनुसार वे राज्य भी अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के संविधान में शामिल हो सकते हैं जो इसके सदस्य नहीं होते। नई सदस्यता के लिए निम्नांकित शर्तें लगाई जाती हैं –

1. संविधान तथा न्यायालय के सम्बन्ध में दूसरे प्रतिबन्धों को स्वीकार करना।
2. महासभा द्वारा अनुमानित व्यय में अपना योगदान देना।

अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में 15 न्यायाधीश होते हैं जो कि वे अन्तर्राष्ट्रीय कानून में मान्य योग्यता के विधिवेत्ता या उच्च अदालती कार्यालयों में नियुक्ति के लिए अपने–अपने देशों में आवश्यक योग्यता वाले लोगों में से उच्च नैतिक चरित्र के मालिक होंगे। उन्हें राष्ट्रीयता का विचार किये बिना चुना जाएगा। इसके अलावा कुछ तदर्थ न्यायाधीश भी होते हैं।

न्यायाधीशों का चुनाव –

महासभा तथा सुरक्षा परिषद एक–दूसरे से बिल्कुल स्वतन्त्र न्यायालय के सदस्य बनने के लिए आवश्यक उम्मीदवारों की नियुक्ति करते हैं। वे व्यक्ति जो सुरक्षा तथा महासभा में पूर्ण बहुमत प्राप्त कर लेते हैं, निर्वाचित घोषित कर दिये जाते हैं।

न्यायाधीशों का कार्यकाल –

अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीशों का कार्यकाल 9 वर्ष का होता है तथा हर 3 वर्ष के बाद 5 न्यायाधीश सेवानिवृत्त हो जाते हैं। न्यायाधीश पुनः भी चुनाव लड़ सकते हैं। हालाँकि राष्ट्रीय सरकारें न्यायाधीशों को मनोनीत करने तथा उनके चुनाव में भाग लेती हैं, परन्तु न्यायाधीश न तो अपने देश के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करते हैं, न ही अपनी सरकार के निर्देशों के अनुसार। भारत के जस्टिस दलवीर भंडारी वर्तमान में अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीश है।

2.10 शक्तियाँ एवम् क्षेत्राधिकार (Powers & Jurisdiction) –

1. **ऐच्छिक क्षेत्राधिकार (Optional Jurisdiction)** –

अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के पास राज्यों के मुकद्दमों के सम्बन्ध में ऐच्छिक क्षेत्राधिकार है। इसका अर्थ है कि ऐसे मुकद्दमें राज्य किसी समझौते के अन्तर्गत इसमें लाते हैं। किसी भी राज्य पर यह प्रतिबन्ध नहीं है कि वह अपने मुकद्दमें इसी न्यायालय में लाये।

2. **अनिवार्य क्षेत्राधिकार (Compulsory Jurisdiction)**–

अनुच्छेद 30 के अनुसार, राज्य निम्नलिखित प्रकार के मुकद्दमों में इसके क्षेत्राधिकार को अनिवार्य मान सकते हैं –

- सन्धि की व्याख्या;
- अन्तर्राष्ट्रीय कानून सम्बन्धी प्रश्न;
- कोई भी वास्तविकता जो स्थापित हो चुकी हो, अन्तर्राष्ट्रीय दायित्व की शाखा बन जाएगी;
- अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिबन्ध को भंग करने की स्थिति में क्षतिपूर्ति का स्वरूप तथा सीमा।

3. **सलाहकारी क्षेत्राधिकार (Advisory Jurisdiction)** –

अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के पास महासभा, सुरक्षा समिति तथा महासभा द्वारा स्थापित की गई दूसरी विशिष्ट एजेन्सियों को कानूनी प्रश्नों पर सलाह देने की भी शक्ति है। अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय की सलाह लिखित निवेदन द्वारा ली जाती है। न्यायालय स्वयं ही अपना मत प्रकट नहीं करता। इसके अतिरिक्त, इसकी सलाह को, सलाह मांगने वाली एजेन्सी द्वारा मानना आवश्यक नहीं होता। इसका मत सलाह ही होता है, निर्णय नहीं।

2.11 न्यास परिषद् (Trusteeship Council) –

संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनुच्छेद 7 में संयुक्त राज्य की न्यास परिषद् इसके छः प्रमुख अंगों में से है। यद्यपि इसे संयुक्त राष्ट्र में सम्मानित जगह प्राप्त है फिर भी यह एक अधीनस्थ अंग है क्योंकि महासभा के सहायक अंग के रूप में यह असामरिक ट्रस्ट भूक्षेत्रों के प्रशासन का निरीक्षण तथा सामरिक क्षेत्रों के मामले में सुरक्षा समिति के सहायक अंग के रूप में कार्य करती है। 1994 के बाद से इसका वैधानिक अस्तित्व तो है, किंतु सक्रिय भूमिका समाप्त हो गई है।

2.12 योगदान (Contribution) –

न्यास परिषद ने राजनीतिक, आर्थिक एवम् सामाजिक क्षेत्रों में काफी विकास किया है। समिति ने अपना अधिक ध्यान इन प्रदेशों के राजनीतिक विकास की ओर दिया है। समिति ने इन प्रदेशों के लोगों को ऐसे कदम उठाने के लिए प्रेरित किया है जिनसे उनके अन्दर राजनीतिक जागृति पैदा हो। आर्थिक क्षेत्र में समिति ने विस्तृत आर्थिक योजना की आवश्यकता पर बल दिया है। समिति ने दौरों के दौरान काफी कुछ जाना है तथा कुछ आर्थिक समस्याओं पर सुझाव भी दिए हैं। इसी प्रकार समिति ने प्रवासी मजदूरों जैसे सामाजिक महत्त्वपूर्ण मामलों को सुलझाने में भी उन्नति की है। आई.सी.ओ. के विशेषज्ञों ने उनके इन प्रयत्नों में उन्हें

सहायता प्रदान की है। इसके अतिरिक्त 11 में से 10 इस तरह के भू–क्षेत्रों ने स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली है या अधिदेश शासन की व्यवस्था के कारण दूसरे राज्यों में मिल गए हैं।

2.13 आर्थिक तथा सामाजिक परिषद् (Economic & Social Council)

संयुक्त राष्ट्र का उद्देश्य मात्र युद्ध रोकना तथा शान्ति बनाए रखना ही नहीं बल्कि राज्यों के आर्थिक तथा सामाजिक कल्याण की ओर भी ध्यान देना है। संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के निर्माता इस सच्चाई से भली–भाँति परिचित थे कि विश्व में एक जैसी सामाजिक एवम् आर्थिक उन्नति के बिना अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति तथा सुरक्षा की स्थापना नहीं की जा सकती। चार्टर के अनुच्छेद एक के अनुसार, "संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न उद्देश्यों में से एक उद्देश्य है, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा लोकोपकारी स्वरूप की समस्याओं को सुलझाने के लिए राष्ट्रों के बीच सहयोग प्राप्त करना तथा जाति, भाषा, लिंग तथा धर्म के उल्लेख बिना मानव के मूल अधिकारों तथा स्वतन्त्रताओं के लिए लोगों में सम्मान की भावना पैदा करना।"

2.14 सचिवालय तथा महासचिव (Secretariat & General Secretary)

सचिवालय संयुक्त राष्ट्र के मुख्य अंगों में से एक है। यह संयुक्त राष्ट्र का मुख्यालय है जो संयुक्त राष्ट्र के अन्य संगठनों या एजेन्सियों द्वारा बनाए गए प्रोग्रामों तथा नीतियों को प्रशासित एवम् समन्वित करता है। प्रशासनिक मुखिया होने के नाते महासचिव के कितने ही सहायक महासचिव, विशेषज्ञ, प्रशासन अधिकारी तथा क्लर्क होते हैं। सचिवालय का प्रभारी होने के नाते महासचिव का मुख्य कार्य संयुक्त राष्ट्र के रिकार्ड रखना तथा उन कार्यों को करना है जिनको चार्टर द्वारा प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप में किसी भी अंग को न दिए गए हों। सचिवालय का स्टाफ महासभा द्वारा स्थापित नियमों के आधार पर महासचिव द्वारा नियुक्त किया जाता है।

2.15 संयुक्त राष्ट्र संघ से सम्बन्धित विशेष एजेन्सियाँ (Special Agencies of UNO)

अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण में संयुक्त राष्ट्र संघ के साथ–साथ कई एक विशेष एजेन्सियाँ सक्रिय और प्रभावशाली अन्तर्राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओं के रूप में कार्य कर रही हैं। इनमें बहुत सी एजेन्सियाँ संयुक्त राष्ट्र संघ के साथ विशेष समझौतों के आधार पर सम्बन्धित हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में वर्णित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए यह एजेन्सियाँ भी महत्त्वपूर्ण भूमिकाएं निभा रही है। इनमें से कुछ प्रमुख विशेष एजेन्सियाँ निम्नांकित हैं –

यूनेस्को (UNESCO) UN Educational, Scientific and Culturd

यूनेडो (UNIDO)

डब्ल्यू.एच.ओ. (WHO) The World Health Organization

डब्ल्यू.आई.पी.ओ. (WIPO) The World Intellectud Project Organization

यू.पी.यू.) (UPU) The Universal Postal Union

आई.टी.यू. (ITU) The International Telecommunication Union

आई.ए.ई.ए. (IAEA) The International Atomic Energy Agency

एफ.ए.ओ. (FAO) The Food and Agriculture Organization of The Union

आई.एफ.ए.डी. (IFAD) The International Fund for Agricultural Development

आई.सी.ए.ओ. (ICAO) The International Civil Aviation Organization

यू.एन.आई.डी.ओ. (UNIDO) The Un Indastrial Development Organization

आई.एम.ओ. (I.M.O.) International Maritime Organization

डब्ल्यू.टी.ओ. (W.T.O.) World Trade Organization

2.16 संयुक्त राष्ट्र की भूमिका (Role of UNO) –

विश्व शान्ति तथा सुरक्षा को बनाये रखना आज के युग की सर्वोपरि आवश्यकता है। दूसरे विश्व युद्ध, जो कि पहले विश्व युद्ध के केवल 20 वर्ष बाद ही आरम्भ हो गया था, की समाप्ति के समय सभ्य राज्यों ने विश्व शान्ति और सुरक्षा की रक्षा के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन की स्थापना को एक आवश्यक और उत्तम उपकरण माना तथा 24 अक्टूबर, 1945 के दिन संयुक्त राष्ट्र की स्थापना की।

संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर की प्रस्तावना में ही यह घोषणा की गई कि इस अन्तर्राष्ट्रीय संगठन में शामिल हुए लोगों का लक्ष्य है, आने वाली पीढ़ीयों को युद्ध की त्रासदी से बचाना। इस चार्टर में संयुक्त राष्ट्र के सामने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में शान्ति और सुरक्षा को बनाए रखने को प्राथमिकता दी गई। युद्ध को गैर–कानूनी क्रिया बतलाया गया तथा युद्ध को रोकने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ को निःशस्त्रीकरण की प्राप्ति, उपनिवेशवाद की समाप्ति, विभिन्न राष्ट्रों में शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व तथा सहयोग को विकसित करने तथा विश्व शान्ति एवम् सुरक्षा की रक्षा करने के उत्तरदायित्व सौंपे गये।

इस वास्तविकता का घोषणा–पत्र की विषय–वस्तु में भली–भाँति पता चला जाता है। इसमें 'अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति तथा सुरक्षा' शब्द 32 बार प्रयोग किए गए हैं। घोषणा–पत्र के प्रथम अनुच्छेद में, संयुक्त राष्ट्र के उद्देश्य के बारे में बतलाते हुए,

अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवम् सुरक्षा को संयुक्त राष्ट्र की मुख्य प्राथमिकता बतलाया गया है। इस अनुच्छेद के अनुसार, "अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवम् सुरक्षा कायम रखना तथा इसके लिए प्रभावपूर्ण सामूहिक प्रयत्नों द्वारा शान्ति के संकटों को रोकना और समाप्त करना तथा आक्रमण एवम् शान्ति–भंग की अन्य चेष्टाओं को दबाना एक अन्तर्राष्ट्रीय उद्देश्य है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने इन सभी उत्तरदायित्वों को निभाने का भरसक प्रयास अपने अस्तित्व के पिछले लगभग सात दशकों में किया है। निःशस्त्रीकरण, परमाणु तथा निःशस्त्रीकरण की दिशा में इसने कई एक संस्थागत उपक्रम किये हैं और कर रहा है। विभिन्न देशों में आपसी मित्रता तथा सहयोग स्थापित करने में इसने एक अन्तर्राष्ट्रीय मंच की तरह कार्य किया है। इसने विभिन्न देशों तथा उनके नागरिकों में सामाजिक–आर्थिक– सांस्कृतिक सहयोग का विकास करने का सराहनीय कार्य किया है। नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना करने तथा हिन्द महासागर को शान्ति का क्षेत्र घोषित करने, परमाणु निःशस्त्रीकरण तथा शस्त्र–नियन्त्रण के लिए कार्य करने, परतन्त्र उपनिवेशों को स्वतन्त्रता प्रदान करने, नस्लवाद की समाप्ति करने, दक्षिण अफ्रीका में प्रजाति–पार्थक्य की नीति को समाप्त करने आदि कई एक अन्य अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान के लिए प्रस्ताव पास किये हैं। उपनिवेशवाद तथा साम्राज्यवाद की समाप्ति के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने विशेष तौर पर सराहनीय भूमिका अदा की है।

2.17 विश्व शान्ति व सुरक्षा तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रयास (World Peace & UN Efforts)

1945 से लेकर अब तक कई बार ऐसे अवसर पैदा हुए जिनमें स्थानीय युद्ध विश्व युद्ध अथवा क्षेत्रीय युद्धों में परिवर्तित हो सकते थे। लेकिन संयुक्त राष्ट्र ने सामूहिक सुरक्षा कार्यवाही के द्वारा ऐसे युद्धों को फैलने से रोका। इसने सैनिक कार्यवाही तथा अन्य साधनों द्वारा जो इसके चार्टर के सातवें अध्याय में वर्णित हैं, का प्रयोग करके विश्व में शान्ति की स्थापना के लिए कार्यवाही की। कई एक जटिल समस्याओं को वार्तालाप तथा अन्य शान्तिपूर्ण साधनों के द्वारा हल करने की पहल इस अन्तर्राष्ट्रीय संगठन ने की और आज भी कर रहा है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा विश्व शान्ति की सुरक्षा के लिए इन समस्याओं के हल हेतु प्रयास किए गए –

1. ईरान समस्या
2. यूनान विवाद
3. इण्डोनेशिया विवाद
4. कश्मीर विवाद
5. दक्षिण अफ्रीका में नस्लवाद तथा संयुक्त राष्ट्र संघ
6. कांगो संकट

2.18 संयुक्त राष्ट्र संघ की प्रासंगिकता (Relevance of UNO) –

यह ठीक है कि शीत युद्ध के समय 1945–70 तथा 1980–89 के दौरान संयुक्त राष्ट्र संघ कई विवाद का हल उचित समय पर नहीं कर सका। ईरान–इराक युद्ध दस वर्ष तक चलता रहा। अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप भी लगभग 10 वर्ष तक बना रहा। शीत युद्ध काल में लगभग 100 प्रमुख विवाद हुए जिनमें लगभग 2 करोड़ लोग मारे गये। संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् में 279 बार स्थाई सदस्यों ने वीटो शक्ति का प्रयोग कर संयुक्त राष्ट्र को कार्य करने से रोका।

आजकल भी संयुक्त राज्य अमरीका संयुक्त राष्ट्र संघ पर शीत युद्ध की समाप्ति, सोवियत संघ के विघटन, यूरोप के कुछ देशों में अस्थिरता, खाड़ी युद्ध में सफलता के बाद सुदृढ़ राष्ट्रों को संयुक्त राष्ट्र संघ व्यवस्था को संयुक्त रूप से संचालित करने के लिए सहयोग करना चाहिए। लेकिन इसके लिए सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि संयुक्त राष्ट्र के सबसे शक्तिशाली अंग, सुरक्षा परिषद् का लोकतान्त्रीकरण, विकेन्द्रीकरण एवम् शक्तिकरण किया जाए। संयुक्त राष्ट्र संघ आज 193 देशों का संगठन है। लेकिन इसकी सुरक्षा परिषद् में विश्व के सभी महाद्वीपों एवम् प्रमुख शक्तियों को उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है। इस बात की परम आवश्यकता है कि इस संस्था की सदस्य संख्या में वृद्धि की जाए और इसमें भारत, जापान, जर्मनी तथा ब्राजील को स्थाई सदस्यता प्रदान की जाए। इसके साथ ही गैर–स्थाई सदस्यों की संख्या में भी वृद्धि की जानी चाहिए। वास्तव में इस बात की आवश्यकता है कि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् की सदस्यता को 15 से बढ़ाकर कम से कम 25 अथवा 27 अवश्य किया जाए। आज के अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की यह एक स्वाभाविक आवश्यकता है।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु –

- संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना 24 अक्टुबर 1945 को हुई
- संयुक्त राष्ट्र संघ में 111 अनुच्छेद है।
- संयुक्त राष्ट्र संघ स्थापना का उद्देश्य –
  - अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवम् सुरक्षा बनाए रखना।
  - आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा मानवीय, किसी भी प्रकार की अन्तर्राष्ट्रीय समस्या को सुलझाना।
  - समान अधिकारों के लिए आदर एवम् मित्रतापूर्ण सम्बन्ध कायम करना।
  - उपर्युक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कार्य को सुव्यवस्थित करने का केन्द्र बनना।
- संयुक्त राष्ट्र संघ की प्रमुख एजेन्सियाँ – यूनेस्को, विश्व

बैंक, विश्व स्वास्थ्य संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा संगठन, युनिसेफ आदि।

•

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्यों से कौनसा कथन मेल नहीं खाता है –
   (अ) अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति व सुरक्षा बनाए रखना।
   (ब) विश्व को युद्धों से बचाना।
   (स) भारत–पाकिस्तान के मध्य व्यापार की देख–रेख।
   (द) अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने की पहल। ( )
2. संयुक्त राष्ट्र संघ के संस्थापक सदस्यों की संख्या थी –
   (अ) 193 (ब) 51
   (स) 15 (द) 05 ( )
3. इनमें से कौनसा राष्ट्र सुरक्षा परिषद् का स्थाई सदस्य है –
   (अ) फ्रांस (ब) भारत
   (स) भारत (द) आस्ट्रेलिया ( )
4. शिक्षा व संस्कृतियों के प्रसार हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ एजेन्सी है –
   (अ) विश्व बैंक (ब) विश्व स्वास्थ्य संगठन
   (स) यूनेस्को (द) अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष ( )
5. अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में वर्तमान में भारत के कौन न्यायाधीश चुने गए है –
   (अ) जस्टिस दलवीर भंडारी
   (ब) ज. डॉ. नगेन्द्रसिंह
   (स) ज. विनीत कोठारी
   (द) ज. अमरसिंह गोदारा ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना कब हुई ?
2. अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय का मुख्यालय किस शहर में है ?
3. सुरक्षा परिषद् में अस्थाई सदस्यों की संख्या कितनी है ?
4. संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् के स्थायी सदस्यों की विशेष शक्ति का क्या नाम है ?
5. वर्तमान में यूएन महासचिव कौन है ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रमुख उद्देश्य बताइए।
2. महासभा के तीन प्रमुख कार्य क्या है ?
3. सुरक्षा परिषद् के पाँच स्थाई सदस्यों के नाम लिखिए।
4. न्यास परिषद् क्या काम करता है ?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के मुख्य उद्देश्य व उसकी वर्तमान प्रासंगिकता पर प्रकाश डालिए।
2. संयुक्त राष्ट्र संघ के संगठनात्मक ढाँचे पर एक लेख लिखिए।
3. सुरक्षा परिषद् का गठन अन्तर्राष्ट्रीय शांति व सुरक्षा के लिए किया गया था किन्तु आज वह महाशक्तियों का आभामंडल बनकर रह गई है। क्या आप इस कथन से सहमत है ?समालोचनात्मक विवेचन कीजिए।

बहुचयनात्मक प्रश्नों की उत्तरमाला

1. स 2. ब 3. अ 4. स
5. अ

3. भारत के पड़ौसी देशों से सम्बन्ध – पाकिस्तान, चीन और नेपाल
(India's Relations With Its Neighbours-Pakistan, China & Nepal)

भारत के पड़ोसी देशों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और बेहद संवेदनशील सम्बन्ध वर्तमान समय में चीन, नेपाल और पाकिस्तान के साथ ही बने हुए हैं। यद्यपि भारत की विदेश नीति का मूल तत्व है पड़ोसी मुल्कों के साथ सद्भाव, शान्ति और मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखे जाएँ। किन्तु कहा जाता है कि मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों का निर्वहन करने के लिए दोनों पक्षों की परस्पर सहमति और सद्इच्छा का होना आवश्यक है। इस दृष्टि से भारत अपनी सीमाओं से सटे पड़ोसियों के साथ सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्धों का हिमायती तो अवश्य है किन्तु अपनी सीमाओं में घुसपैठ, अतिक्रमण और देश के अन्दरूनी मामलों में हस्तक्षेप की कीमत पर चुप नहीं बैठ सकता। इसीलिए जब कभी पड़ोसी राष्ट्र अपनी हदों को पार करने लगते हैं तो भारत द्वारा प्रत्युत्तर देना ही पड़ता है। स्वतन्त्रता के तुरन्त बाद यद्यपि भारत के चीन और नेपाल से परस्पर सम्बन्ध सामान्य और मैत्रीपूर्ण ही थे, लेकिन बाद में चीन द्वारा आकस्मिक रूप से भारतीय सीमाओं में घुसपैठ (सन् 1962) और सीमा का अतिक्रमण दोनों देशों के बीच भारी कड़वाहट का कारण बना। नेपाल में वहाँ के राजा वीरेन्द्र वीर विक्रम शाह की सपरिवार हत्या के बाद उपजे हालात थोड़े सुधरे अवश्य लेकिन अब भी पूर्णरूपेण ठीक नहीं कहे जा सकते। कभी भारत का हिस्सा रहे पड़ोसी मुल्क पाकिस्तान के साथ संबंध सच्चे अर्थों में कभी भी मैत्रीपूर्ण नहीं रहे। पाकिस्तान ने 14 अगस्त, 1947 को अपने गठन के कुछ समय बाद ही भारत के अभिन्न अंग कश्मीर पर आक्रमण कर एक भाग पर अनाधिकृत रूप से कब्जा कर लिया, जिसे पाकिस्तान ने आज तक खाली नहीं किया है।

भारतीय विदेश नीति का अध्ययन करने से यह बात साफ हो जाती है कि भारत को निरन्तर जटिल चुनौतियाँ मिल रही हैं। आजादी के तत्काल बाद ही पाकिस्तान द्वारा कश्मीर विवाद प्रकट किया गया और इसी कारण एक युद्ध का विस्फोट भी। तबसे आज तक उसके साथ तीन और युद्ध लड़े जा चुके हैं जिनके बावजूद कश्मीर विवाद निपटा नहीं है। इसी तरह चीन और नेपाल के साथ भी अनेक पेचिदगियाँ उभरी हैं।

पड़ोसी देशों के साथ सदियों पुरानी मैत्री भी सीमा विवाद और सैनिक टकराव के कारण उलझ रही हैं। बड़ी शक्तियों के साथ अपने सम्बन्धों को परस्पर लाभप्रद ढंग से बनाए रखना आसान नहीं रहा। इन सब के अलावा अपने छोटे पड़ोसियों, नेपाल तथा श्रीलंका के साथ भी उभयपक्षीय सम्बन्धों में बीच–बीच में तनाव पैदा होने से राष्ट्रीय सुरक्षा को जोखिम का सामना करना पड़ा है। श्रीलंका में साम्प्रदायिक गृह–युद्ध हो या बांग्लादेश का संघर्ष अथवा भूमिबद्ध नेपाल को अभयारण्य के रूप में इस्तेमाल कर भारत के अलगाववाद को प्रोत्साहित करना, ये सभी मुद्दे भारतीय विदेश नीति का सरदर्द बनते रहे हैं।

इस प्रकार भारत के उक्त तीनों देशों के साथ सम्बन्धों का व्यापक सन्दर्भ है, जिस पर विस्तृत अध्ययन हेतु आगे उल्लेख किया गया है।

3.1 भारत पाकिस्तान सम्बन्ध (India & Pakistan Relations)

एशिया महाद्वीप में ब्रिटिश उपनिवेशवाद की समाप्ति के साथ एक नये संघर्ष की शुरुआत हुई, जिसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में 'शान्ति' शब्द का लोप ही हो गया। यह संघर्ष है दो पड़ौसी देशों का संघर्ष, जिसे भारत–पाक संघर्ष के नाम से जाना जाता है, जिसके मूल में पाकिस्तान की आतंकवादियों को सत्ता समर्थन और अनुचित परमाणु प्रसार की गतिविधियाँ हैं।

भारत–पाक संघर्ष की प्रकृति को सही रूप में समझने के लिए भारत विभाजन में निहित तथ्यों का अध्ययन आवश्यक है। विभाजन की घटना ने दो समुदायों के बीच घृणा, अविश्वास और वैमनस्य को उजागर किया है। विभाजन के बाद पाकिस्तान द्वारा सभी समस्याओं के स्वयं ही सुलझ जाने का जो सपना देखा गया था वह वास्तविकता में स्वयं पाकिस्तान ने ही उलझा दिया। पाकिस्तान ने अपने जन्म से ही समस्याएं अत्यधिक उलझाई और इस महाद्वीप में स्थाई रूप से संघर्ष का सूत्रपात कर दिया।

3.2 भारत–पाक सम्बन्धों को प्रभावित करने वाली समस्याएं (Problematic Areas of India Pakistan Relations) –

भारत–पाक सम्बन्धों को प्रभावित करने वाली समस्याएं मुख्यतः तीन प्रकार की हैं –

1. विभाजन से उत्पन्न होने वाली समस्याएं
2. भारत विरोधी नीति से उत्पन्न होने वाली समस्याएं और आतंकवाद को खुला समर्थन
3. पाकिस्तान की सीटो, सेण्टों की सदस्यता तथा भारत की घेराबन्दी और चीन, अमेरिका के साथ भारत विरोधी समूह बनाना।

आजादी के साथ ही भारत–पाक में सैन्य तनाव को दर्शाने वाले तथ्य –

1. भारत और पाकिस्तान विकास कार्यों पर अपने सकल घरेलू उत्पाद का क्रमशः 6.2 प्रतिशत तथा 3.8 प्रतिशत व्यय।
2. भारत और पाकिस्तान अपनी सैन्य तैयारियों पर अपने सकल घरेलू उत्पाद का क्रमशः 2.9 प्रतिशत तथा 4.7 प्रतिशत व्यय।
3. पाकिस्तान जेहाद और आतंकवाद से जुड़ी गतिविधियों पर अपने सकल घरेलू उत्पाद का 8 प्रतिशत से अधिक व्यय करता है, जबकि भारत का इस क्षेत्र में व्यय शून्य है।
4. पाकिस्तान द्वारा भारत में तस्करी के जरिए होने वाले अवैध व्यापार द्वारा अनुचित घुसपैठ।
5. तनावपूर्ण सम्बन्धों के कारण भारत को सियाचिन सहित सीमाओं की हिफाजत पर प्रतिवर्ष लगभग 9 हजार करोड़ रूपये का अतिरिक्त व्यय करना पड़ रहा है।
6. कश्मीर के एक भाग पर पाकिस्तान का अनाधिकृत कब्जा।

3.3 विभाजन से उत्पन्न होने वाली समस्याएं –

भारत को आशा थी कि देश के विभाजन के बाद शान्ति और आपसी मेल–जोल को बढ़ावा मिलेगा और दोनों देशों में शान्ति, सद्भावना और सहयोग के वातावरण से आर्थिक विकास के लम्बे और कठिन कार्य आरम्भ हो जायेगें। लेकिन पाकिस्तान ने अपने जन्म के साथ ही कुछ ऐसी समस्याएं पैदा कर दी जिनके कारण प्रारम्भ से ही दोनों देशों के मध्य सम्बन्धों में कटुता आ गई। ये समस्याएं थीं – 1. हैदराबाद विवाद, 2. जूनागढ़ विवाद, 3. ऋण की अदायगी का प्रश्न, 4. नहरी पानी विवाद, 5. शरणार्थियों का प्रश्न और 6. कश्मीर पर कब्जा।

3.4 कश्मीर विवाद –

भारत–पाकिस्तान के मध्य अन्य सभी समस्याओं में ज्वलन्त और स्थाई है कश्मीर की समस्या। दोनों देशों के बीच यह एक ऐसे ज्वालामुखी की तरह है, जो समय–समय पर लावा उगलती रहती है। अलाप माईकल के शब्दों में – "कश्मीर समस्या अनिवार्यतः भूमि या पानी की समस्या नहीं यह दोनों देशों के लोगों और प्रतिष्ठा का प्रश्न है।"

कश्मीर की समस्या भारत और पाकिस्तान के बीच सबसे उलझी हुई समस्या है। स्वतन्त्रता के बाद जहाँ भारत और पाकिस्तान दो नये देश बने वहीं देशी रियासतें एक प्रकार से स्वतन्त्र हो गई। ब्रिटिश सरकार ने घोषणा कर दी थी कि देशी रियासतें अपनी इच्छानुसार भारत अथवा पाकिस्तान में विलय हो सकती हैं। अधिकांश रियासतें भारत अथवा पाकिस्तान में मिल गई और उनकी कोई समस्या उत्पन्न नहीं हुई। भारत के लिए हैदराबाद और जूनागढ़ ने अवश्य समस्या उत्पन्न कर दी थी परन्तु वह शीघ्र ही हल कर ली गई। कश्मीर की स्थिति कुछ विशेष प्रकार की थी। भारत की उत्तर–पश्चिम सीमा पर स्थित यह राज्य भारत और पाकिस्तान दोनों को जोड़ता है। यहाँ की जनसंख्या का बहुसंख्यक भाग मुस्लिम धर्मी था, परन्तु वहाँ का आनुवांशिक शासक एक हिन्दू राजा था। अगस्त, 1947 में कश्मीर के शासक ने अपने विलय के विषय में कोई तात्कालिक निर्णय नहीं किया। पाकिस्तान इसे अपने साथ मिलाना चाहता था। 22 अक्टूबर, 1947 को उत्तर–पश्चिम सीमाप्रान्त के कबायलियों के भेष में पाकिस्तानी सेना ने कश्मीर में घुसपैठ कर आक्रमण कर दिया। साथ ही पाकिस्तान ने अपनी सीमा पर भी सेना का जमाव कर लिया। 4 दिनों के भीतर ही हमलावर आक्रमणकारी श्रीनगर से 25 मील दूर बारामुला तक जा पहुँचे। 26 अक्टूबर को कश्मीर के राजा ने आक्रमणकारियों से अपने राज्य को बचाने के लिए भारत सरकार से सैनिक सहायता की माँग की और साथ ही कश्मीर को भारत में सम्मिलित करने की प्रार्थना की। भारत सरकार ने इस प्रस्ताव को तत्काल स्वीकार कर लिया। 27 अक्टूबर को भारतीय सेनाऐं कश्मीर भेज दी गई तथा युद्ध समाप्ति पर जनमत संग्रह की शर्त के साथ कश्मीर को भारत का अंग मान लिया गया।

भारत द्वारा जम्मू व कश्मीर की सुरक्षा व कश्मीर के भारत में विलय के निर्णय के कारण और उधर पाकिस्तान द्वारा आक्रमणकारियों को सहायता देने की नीति के कारण कश्मीर दोनों राष्ट्रों के बीच युद्ध का क्षेत्र बन गया। भारत सरकार ने पाकिस्तान से कहा कि कबायलियों का मार्ग बन्द करे, परन्तु जब इस बात के प्रमाण मिलने लगे कि पाकिस्तान सरकार स्वयं इन कबायलियों की सहायता कर रही है तो 1 जनवरी, 1948 को भारत सरकार ने सुरक्षा परिषद् में शिकायत की कि पाकिस्तान की सहायता से कबायलियों ने भारत के प्रमुख अंग कश्मीर पर आक्रमण कर दिया है, जिससे अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति

और सुरक्षा को खतरा है। सुरक्षा परिषद् ने इस समस्या का समाधान करने के लिए 5 राष्ट्रों – चेकोस्लोवाकिया, अर्जेण्टाइना, अमरीका, कोलम्बिया और बेल्जियम को सदस्य नियुक्त कर मौके की स्थिति का अवलोकन करके समझौता कराने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र आयोग की नियुक्ति की।

3.5 संयुक्त राष्ट्र आयोग के कार्य –

संयुक्त राष्ट्र आयोग ने तुरन्त अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया और मौके पर स्थिति का अध्ययन कर 13 अगस्त, 1948 को दोनों पक्षों से युद्ध बन्द करने और समझौता करने हेतु निम्नांकित आधार प्रस्तुत किये –

1. पाकिस्तान अपनी सेनाऐं कश्मीर से हटाये तथा कबायलियों व घुसपैठियों को भी वहाँ से हटाये।
2. सेनाओं द्वारा खाली किये गये प्रदेश का शासन प्रबन्ध स्थानीय अधिकारी करे।
3. पाकिस्तान द्वारा उपर्युक्त वर्णित शर्तों को पूरा करने की सूचना भारत को दे तब समझौते के अनुसार वह भी अपनी सेनाओं का अधिकांश भाग वहाँ से हटा ले।
4. भारत सरकार युद्ध विराम के अन्दर उतनी ही सेनाऐं रखे जितनी कि इस प्रदेश में कानून और व्यवस्था बनाये रखने के कार्य में स्थानीय अधिकारियों को सहायता देने के लिए वांछनीय हो।

इस सिद्धान्त के आधार पर दोनों पक्ष एक लम्बी वार्ता के बाद 1 जनवरी, 1949 को युद्ध विराम के लिए सहमत हो गये। कश्मीर के विलय का अन्तिम निर्णय जनमत संग्रह से किया जाना था। जनमत संग्रह की शर्तों को पूरा करने के लिए एक अमरीकी नागरिक एडमिरल चेस्टर निमित्ज को प्रशासक नियुक्त किया गया। उन्होंने जनमत संग्रह के सम्बन्ध में दोनों पक्षों से बातचीत की किन्तु उसका कोई परिणाम नहीं निकला। अन्त में उन्होंने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया।

युद्ध विराम के साथ सीमा रेखा निर्धारित हो जाने पर पाकिस्तान के हाथ में कश्मीर का 32000 वर्गमील क्षेत्रफल रह गया, जिसकी जनसंख्या 7 लाख थी। पाकिस्तान ने इस क्षेत्र को 'आजाद कश्मीर' नाम से पुकारा। युद्ध विराम रेखा के इस पार भारत के अधिकार में 53,000 वर्गमील क्षेत्रफल था, जिसकी जनसंख्या 33 लाख थी। स्पष्ट है कश्मीर भारत का ही अंग बना था।

3.6 भारत–पाक के बीच स्थाई है कश्मीर विवाद –

स्वतन्त्रता के समय भारत की आबादी लगभग 34 करोड़ थी और वह दुनिया की दूसरी सबसे ज्यादा आबादी वाला देश था। हम आज भी दूसरे स्थान पर ही हैं। अपने पड़ौसियों के साथ यदि हमारे सम्बन्ध शान्तिपूर्ण रहते तो आर्थिक व सांस्कृतिक सहयोग की बात बढ़ाई जा सकती थी। मगर पाकिस्तान इस बात के लिए कतई तैयार नहीं था। पाकिस्तान, यह मानने को तैयार नहीं था कि कश्मीर घाटी की बहुसंख्यक मुसलमान आबादी भारत के साथ शेख अब्दुल्ला के बताये जनतान्त्रिक, धर्मनिरपेक्ष मार्ग पर ही चलने की इच्छुक है। पाकिस्तान इस बात को भी बहुत जल्द भूल गया कि उसने कश्मीर पर नाजायज कब्जा करने के लिए घुसपैठिये सैनिक भेजे थे और भारत पर एक अघोषित युद्ध थोप दिया था। अक्टूबर 1947 के कबायली आक्रमण से लेकर अब तक पाकिस्तान ने कश्मीर समस्या को पेचीदा बनाने में कोई कसर नहीं रखी है। धन व धर्म का सहारा लेकर पाकिस्तान ने इस विवाद को धार्मिक रंग देकर अत्यंत गंभीर बना दिया है। कश्मीर का मुद्दा भारत की सुरक्षा व अखंडता से जुड़ा हुआ मुद्दा है। तत्कालीन जम्मू कश्मीर राज्य के शासक हरी सिंह को जम्मू कश्मीर राज्य को माउण्टबैटन योजना के तहत् स्वतंत्र घोषित करना और तत्पश्चात पाकिस्तान के साथ ''स्टेण्डस्टिल एग्रीमेण्ट'' (Standstill Agreement) करना कश्मीर और भारत दोनों के लिए दुर्भाग्यपूर्ण रहा। आज जब कभी भी भारत से सहयोग की बात होती है तो पाकिस्तान कश्मीर का कांटा चुभा कर वार्ताओं को असफल कर देता है। यद्यपि उस घटना के बाद कश्मीर में हुए चुनावों ने जनमत के तर्क की हवा निकाल दी है, इसीलिए भारत का तर्क यह है कि जम्मू–कश्मीर राज्य में एक नहीं, अनेक बार निष्पक्ष चुनाव हो चुके हैं और वहाँ की जनता ने अपने आत्म निर्णय के अधिकार का प्रयोग कर यह दिखला दिया है कि वह भारत के साथ ही रहना चाहती है।

3.7 कश्मीर समस्या धर्मनिरपेक्षता और भावनात्मक मुद्दा –

कश्मीर का विवाद सिर्फ विवादग्रस्त भू–भाग तक सीमित नहीं। कश्मीर का भारत का अभिन्न अंग रहना उसकी धर्म–निरपेक्ष पहचान की एक बड़ी कसौटी भी है। कश्मीर राज्य का अर्थ सिर्फ श्रीनगर की घाटी ही नहीं वरन् यह लद्दाख की विस्तृत इलाका, जहाँ सियाचीन का ग्लेशियर फैला है जो इसी राज्य का हिस्सा है। भारत चीन सीमान्त का सबसे बड़ा अतिसंवेदनशील भाग है। भारत सिर्फ पाक अधिकृत कश्मीर और श्रीनगर की घाटी के बीच सम्बन्धों को सामान्य बना कर यह नहीं मान सकता कि विवाद निपटाया जा चुका है। ना ही केन्द्र सरकार जम्मू–कश्मीर राज्य में हिन्दूओं के उत्पीड़न और विस्थापन की अनदेखी कर सकती है। कश्मीर से हिन्दुओं के पलायन ने बहुसंख्यक आबादी को उद्वेलित किया है।

3.8 1965 का भारत–पाक युद्ध –

अप्रेल, 1965 में कच्छ के रण को लेकर भारत और पाकिस्तान के बीच संघर्ष हुआ। पाकिस्तानी सेना की दो टुकडियाँ भारतीय क्षेत्र में घुस गई और कच्छ के कई भागों पर

अधिकार कर लिया। कच्छ–के–रण में उत्पात के साथ–साथ पाकिस्तान ने कश्मीर में भी घुसपैठ प्रारम्भ कर दी थी। यह घुसपैठ पूर्ण योजनाबद्ध थी। कश्मीर में आन्तरिक रूप से उपद्रव एवम् तोड़–फोड़ द्वारा ऐसी स्थिति उत्पन्न करने की योजना थी जिससे भारतीय सेना को कश्मीर से मैदान छोड़कर भागना पड़े। पाकिस्तान को विश्वास था कि कश्मीर की मुस्लिम जनता छापामारों का साथ देगी। 4 तथा 5 अगस्त 1965 को हजारों पाकिस्तानी छापामार सैनिक कश्मीर में घुस आये। पाकिस्तानी घुसपैठ को सदैव के लिए रोकने के विचार से भारत सरकार ने उन स्थानों पर अधिकार करने का निर्णय किया जहाँ से होकर पाकिस्तानी घुसपैठिये कश्मीर के भारतीय हिस्से में आते थे। इसी बीच पाकिस्तान की नियमित सेना ने अन्तर्राष्ट्रीय सीमा रेखा को पार करके भारतीय भू–भाग पर आक्रमण कर दिया और पूर्ण रूप से युद्ध आरम्भ हो गया। 4 सितम्बर, 1965 को सुरक्षा परिषद् ने एक प्रस्ताव पास कर भारत और पाकिस्तान दोनों से अपील की कि वे युद्ध विराम करे। 22 सितम्बर, 1965 को दोनों देशों में युद्ध बन्द हो गया। भारत ने युद्ध में 750 वर्ग मील भूमि पर कब्जा कर लिया और पाकिस्तान को यहाँ मुँह की खानी पड़ी।

3.9 ताशकन्द समझौता –

युद्ध के बाद बीच–बचाव की दृष्टि से सोवियत प्रधानमन्त्री ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति अय्यूब खां और भारत के प्रधानमन्त्री लालबहादुर शास्त्री को वार्ता के लिए ताशकन्द में आमन्त्रित किया। 4 जनवरी, 1966 को यह प्रसिद्ध सम्मेलन प्रारम्भ हुआ और सोवियत संघ के प्रयत्नों के परिणामस्वरूप 10 जनवरी, 1966 को प्रसिद्ध "ताशकन्द समझौते" पर हस्ताक्षर हुए। समझौते के अन्तर्गत भारतीय प्रधानमन्त्री एवम् पाकिस्तान के राष्ट्रपति परस्पर शान्ति बहाली के लिए सहमत हुए।

यद्यपि इस समझौते के कारण भारत को वह सब प्रदेश पाकिस्तान को वापस देने पड़े जो उसने अपार धन एवम् जन की हानि उठाकर प्राप्त किये थे। तथापि यह समझौता निश्चित रूप से भारत और पाकिस्तान के सम्बन्धों में एक शान्तिपूर्ण मोड़ आने का प्रतीक बन गया।

3.10 भारत–पाक युद्ध 1971 तथा शिमला समझौता –

1965 के युद्ध के बाद पाकिस्तान के हालात बदतर होने लगे। तानाशाह शासक जनता के शोषक बन गए। पूर्वी पाकिस्तान (बांग्लादेश) में असन्तोष बढ़ता जा रहा था। शेख मुजीब के नेतृत्व में बांग्लादेश में स्वायत्तता का आन्दोलन प्रारम्भ हो गया। पूर्वी पाकिस्तान पूर्णतया मुजीब के साथ था। पाकिस्तानी जनरल याह्या खां ने बंगालियों पर अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये। घोर अत्याचारों से घबराकर लोग घरबार, सामान छोड़ जान बचाने हेतु भारत की सीमा में प्रवेश करने लगे। 10 हजार शरणार्थी प्रतिदिन भारत आने लगे। शरणार्थियों की संख्या भारत में 1 करोड़ तक पहुँच गई। इसी समय 3 दिसम्बर, 1971 को पाकिस्तानी वायुयानों ने भारत के हवाई अड्डों पर भीषण बमबारी कर दी। 4 दिसम्बर, 1971 को भारतीय वायु सेना ने जवाबी हमला किया। भारत के विमानों ने पाकिस्तान के महत्त्वपूर्ण हवाई अड्डों पर बम वर्षा की। भीषण युद्ध के बाद पाक सेना को पराजय का सामना करना पडा और एक नए देश बांग्लादेश का उदय हुआ। 16 दिसम्बर, 1971 को ढ़ाका में एक सैनिक समारोह में जनरल नियाजी ने भारत के लेफ्टिनेंट जनरल जगजीत सिंह अरोरा के सम्मुख आत्म–समर्पण कर दिया। उनके साथ 93 हजार सैनिकों ने भी हथियार डाल दिये और उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। बांग्लादेश स्वतन्त्र हो गया तथा भारत ने एकतरफा युद्ध विराम कर दिया। भारत ने इस युद्ध में पाकिस्तान की 6 हजार वर्ग मील भूमि पर अधिकार कर लिया। पाकिस्तानी जनरल याह्या खां को सत्ता छोड़नी पड़ी, उनके स्थान पर सत्ता जुल्फिकार अली भुट्टों के हाथ में आ गई। भुट्टों और श्रीमती गाँधी में पत्र–व्यवहार हुआ और 28 जून, 1972 को दोनों देशों के मध्य शिमला में वार्ता होना तय हुआ। 3 जुलाई, 1972 को दोनों देशों के बीच एक ऐतिहासिक "शिमला समझौता" हो गया। इस समझौते का लक्ष्य दोनों देशों के बीच शान्ति स्थापित करना था।

शिमला समझौते के आलोचकों का कहना है कि भारत के सैनिकों ने जिसे युद्ध के मैदान में जीता था उसे भारत की कूटनीति ने शिमला में खो दिया, अर्थात् कश्मीर समस्या का स्थाई हल ढूंढ़े बिना भारत ने पाकिस्तान को 5,139 वर्ग मील क्षेत्र लौटा दिया। यद्यपि यह भारत की शान्तिपूर्ण कूटनीति का प्रतिफल था, लेकिन पाकिस्तान ने इसे सही परिप्रेक्ष्य में नहीं लिया। और बाद में पाकिस्तान पुनः अपनी पुरानी शत्रुतापूर्ण नीति का अनुसरण करने लगा।

3.11 आतंकवाद और पाकिस्तान –

हाल के वर्षों में धार्मिक कट्टरवाद के कारण विश्व में आतंकवाद को गहरा बढ़ावा मिला है। खाड़ी के कुछ तेल उत्पादक देशों ने जेहादी जुनून को गैर जिम्मेदाराना ढंग से भड़काया है। सामरिक दबावों के कारण वैश्विक महाशक्तियों ने खाड़ी के विभिन्न देशों में पनप रही साम्प्रदायिकता और धार्मिक कट्टरवाद को लगातार नजरअंदाज किया है। इसके अलावा अफगानिस्तान से 1979 में सोवियत संघ की सेना को निष्कासित करने के लिए अमेरिका ने पाकिस्तान में तालिबान का समर्थन किया। दुनिया भर में धार्मिक कट्टरवाद और आतंकवाद को बढ़ाने में पाकिस्तान की सर्वाधिक भूमिका रही है।

अफगानिस्तान में दशकों से चल रहे गृह युद्ध से परेशान जो शरणार्थी पाकिस्तान पहुँचे वे उसके लिए जोखिम पैदा कर रहे थे, उन्हें पेशेवर जेहादियों के रूप में कश्मीर में प्रवेश कराने

में पाकिस्तान की प्रत्यक्ष भूमिका रही है। पाकिस्तान ने कश्मीर विवाद को अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप देने के लिए जिस आतंकवाद और धार्मिक कट्टरवाद का सहारा लिया था, आज वह उसी के जाल में फंस चुका है।

3.12 पाकिस्तान के खस्ता हालात और भारत की परेशानी –

जब से भारत आजाद हुआ तभी से पड़ोसी देश उसकी विदेशनीति के लिए संकट पैदा करते रहे हैं। धार्मिक आधार पर गठित पाकिस्तान ने धर्म निरपेक्ष भारत से सदैव वैमनस्यपूर्ण व्यवहार किया है। रक्तरंजित साम्प्रदायिक दंगों की विभीषिका और जम्मू–कश्मीर राज्य पर पाकिस्तान द्वारा भेजे गए घुसपैठियों के हमले की वजह से यह सम्बन्ध और भी बिगड़े। सरकारी परिसम्पत्तियों के बंटवारे, शरणार्थी सम्पत्ति के मुआवजे और नदी–जल वितरण जैसे मुद्दे भी उभयपक्षीय रिश्तों को दूषित करते चले गए। सबसे ज्यादा नुकसान तब हुआ जब पाकिस्तान में फौजी तख्ता पलट ने उस देश में जनतन्त्र की किसी भी सम्भावना को नष्ट कर दिया। इसका प्रभाव हुआ दक्षिण एशिया में शीत युद्ध के प्रसार के साथ। गुटनिरपेक्ष भारत, अमेरिकी या सोवियत सैनिक सन्धि संगठनों का सदस्य बनने को राजी नहीं था वहीं पाकिस्तानी फौजी तानाशाह अमेरिकी आर्थिक सहायता की बैसाखी पर टिके थे और उन्हें अपने इशारे पर कठपुतली की तरह नचाना अमेरिकियों के लिए आसान था।

पाकिस्तान में जनतन्त्र का ही पतन नहीं हुआ, सच तो यह है कि वहाँ सत्ता में जनता की सीधी भागीदारी कभी नहीं रही है। फौज ने अधिकाँश समय वहाँ सत्ता सम्भाली है। अशिक्षा, बेरोजगारी और गरीबी के साए में पलता–बढ़ता पाकिस्तान हमेशा ही भारत के लिए सरदर्द रहा है। रही–सही कसर वहाँ के हित समूहों के टकराव और आतंकवादी गतिविधियों के उकसावे ने पूरी कर दी। वास्तव में पाकिस्तान के आन्तरिक व बाह्य दोनों स्थितियां भारत के लिए संभावित खतरे का पर्याय बनी हुई है।

3.13 पाकिस्तान द्वारा आतंकवाद को प्रोत्साहन –

बाद में पाकिस्तान ने पंजाब और जम्मू–कश्मीर सहित भारत के विरुद्ध आतंकवाद को लगातार सहायता पहुँचाने और उसे बढ़ावा दिये जाने के कारण दोनों देशों के बीच सम्बन्धों में काफी कटुता उत्पन्न हुई। भारत के विरुद्ध आतंकवाद को पाकिस्तान के समर्थन तथा भारत के आन्तरिक मामले में हस्तक्षेप करने से उसकी प्रवृत्ति मार्च, 1993 में मुम्बई में हुए विस्फोटों से प्रकट हुई। मुम्बई में हुए बम विस्फोटों की योजना बनाने तथा उसे कार्यरूप देने में पाकिस्तान की सह–अपराधिता से भारतीय जनता का यह मत पक्का हुआ है कि पाकिस्तान भारत के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप के मंसूबे बनाता है और भारत में अस्थिरता पैदा करने के लिए स्थितियों का निर्माण करता है। भारत ने स्पष्ट शब्दों में पाकिस्तान को बताया कि उसके द्वारा भारत के विरुद्ध आतंकवाद को लगातार दिये जा रहे समर्थन से न केवल शिमला समझौते और अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार के लिये सर्वमान्य मानकों का उल्लंघन हुआ है, बल्कि इसका द्विपक्षीय सम्बन्धों में विश्वास का माहौल बनाने के प्रयासों पर भी विपरित प्रभाव पड़ा है।

1980–90 के दशक में पाकिस्तान ने सोवियत आक्रमण के भय की आड़ में अमरीका और चीन से भारी मात्रा में सैनिक साजो सामान और आर्थिक सहायता प्राप्त की। अमरीका और चीन भी दक्षिण एशिया में सोवियत विस्तारवाद को रोकने के बहाने पाकिस्तान को सुदृढ़ और शक्तिशाली बनाने के लिए आधुनिकतम टैंक रोधी मिसाइलें, धरती से धरती और आकाश में मार करने वाली मिसाइलें, एफ–15, एफ–16, एफ–16सी जैसे विध्वंसक वायुयानों की सप्लाई करते रहे। महाशक्तियों द्वारा पाकिस्तान की किलेबन्दी और उसका इस्लामिक बम के नाम पर परमाणु बम बनाने का दुराग्रह भारत के लिए गम्भीर चिन्ता का विषय बन गया। पाकिस्तान ने कारगिल युद्ध में भी करारी हार का सामना किया था, लेकिन वह अब भी लगातार भारतीय सीमा में घुसपैठ और आतंकवादियों का समर्थन कर रहा है।

3.14 भारत–पाक सम्बन्ध : रिश्तों को सुधारने के प्रयत्न –

भारत–पाक सम्बन्धों को सामान्य बनाने के भी प्रयत्न किये जाते रहे हैं। ताशकन्द समझौता तथा शिमला समझौता कुछ इसी प्रकार के प्रयत्न थे। सन् 1974 में जो त्रि–पक्षीय समझौता हुआ उससे युद्धबन्दियों की समस्या का समाधान हुआ। नवम्बर 1974 में दोनों देशों में डाक, तार, यात्रा आदि विषयों के बारें में समझौता हुआ। नवम्बर 1974 में व्यापार समझौता हुआ। सन् 1976 में दोनों देशों में कूटनीतिक सम्बन्धों को पुनः स्थापित करने का निश्चय किया। 14 अप्रेल, 1978 को सलाल जल–विद्युत परियोजना के सम्बन्ध में भारत और पाकिस्तान में एक सन्धि हुई जो सलाल जल–सन्धि के नाम से प्रसिद्ध है। जब सन् 1979 में पाकिस्तान ने सेण्टों की सदस्यता त्याग दी तो उसे सितम्बर, 1979 में हवाना शिखर सम्मेलन में गुट–निरपेक्ष आन्दोलन की सदस्यता प्रदान की गई और भारत ने उसका विरोध नहीं किया। 17 दिसम्बर 1985 को प्रधानमन्त्री राजीव गाँधी और राष्ट्रपति जिया उल हक के मध्य एक छः सूत्री समझौता हुआ जिसमें तय किया गया कि वे एक–दूसरे के परमाणु ठिकानों पर हमला नहीं करेंगे। 10 जनवरी, 1986 को भारत और पाकिस्तान के आपसी आर्थिक सम्बन्धों में एक नये

युग की शुरुआत हुई। दोनों देशों के बीच मुक्त व्यापार पुनः शुरू करने के अलावा सार्वजनिक क्षेत्र के व्यापार को दुगुना करने, दोनों देशों के बीच सीधी हवाई सेवा शुरू करने व वायु सेवा सुविधा बढ़ाने पर सहमति हुई। दिसम्बर, 1988 में पाकिस्तान में बेनजीर भुट्टों के नेतृत्व में लोकतान्त्रिक सरकार की स्थापना हुई। बेनजीर ने भारत के साथ युद्ध–वर्जन सन्धि के प्रस्ताव को ठुकराते हुए कश्मीर समस्या सहित अन्य विवादों के निपटारे के लिए शिमला समझौते के महत्त्व को स्वीकार किया। 31 दिसम्बर, 1988 को दोनों देशों के मध्य तीन समझौतों पर हस्ताक्षर हुए। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण समझौता दोनों देशों के बीच एक–दूसरे के परमाणु संस्थानों पर हमला नहीं करने से सम्बद्ध है। भारत ने एक दिल्ली–लाहौर–दिल्ली बस सेवा आरम्भ करने की पहल की। इस सेवा को नियमित करने के सम्बन्ध में 17 फरवरी, 1999 को इस्लामाबाद में एक करार और एक प्रोटोकॉल सम्पन्न किया गया। भारत के प्रधानमन्त्री अटल बिहारी वाजपेयी ने फरवरी, 1999 में दिल्ली–लाहौर–दिल्ली बस सेवा के उद्घाटन के अवसर पर लाहौर की यात्रा करके ऐतिहासिक पहल की। दोनों देशों के प्रधानमन्त्रियों ने लाहौर घोषणा पर हस्ताक्षर किए जो दोनों देशों की शान्ति और सुरक्षा के लिए एक युगान्तकारी घटना है। इस सद्भवना की आड़ में पाकिस्तान ने कारगिल में घुसपैठ कराकर भारत पर अप्रत्यक्ष युद्ध थोप दिया जिसमें पाकिस्तान की हार हुई। 14–16 जुलाई 2001 में आगरा में परवेज मुशर्रफ और अटल बिहारी वाजपेयी की वार्ता का कोई परिणाम नहीं निकला और उसके पश्चात् 13 दिसम्बर 2001 भारतीय संसद पर पाकिस्तान समर्थित आतंकवादियों ने हमला कर दिया। वर्ष 2003 में भारत–पाक सम्बन्ध उतार–चढ़ाव भरे रहे। बाद में देश के अन्य अनेक नेताओं और शिष्ट मण्डलों ने लगातार परस्पर एक–दूसरे देशों की यात्राऐं की। लेकिन इसका कोई सार्थक परिणाम नहीं निकला।

3.15 वार्ता दर वार्ता नतीजा शून्य –

इस्लामाबाद में सम्पन्न भारत–पाक विदेश मन्त्रियों की वार्ता (15–16 जुलाई, 2010) से जैसी उम्मीद थी, परिणाम भी वैसा ही सामने आया। बातचीत को लेकर भारत सरकार भले ही कोई सार्थक परिणाम निकलने की आस लगाए बैठी हो, लेकिन देश की जनता को यह पता था कि ऐसी बातचीत से न पहले कोई हल निकला है और न ही भविष्य में निकलने वाला है। दोनों देशों के करोड़ो लोग भले ही अमन और भाईचारे की बात सोचते हों, लेकिन पाकिस्तान के हुक्मरान कभी नहीं चाहेंगे कि दोनों देश दोस्ती की गाड़ी पर सवार हों।

पाकिस्तान अपने आतंकवाद को कश्मीर के आतंकवाद से जोड़कर बात को आगे बढ़ाए और समस्या का हल निकालने की दिशा में प्रयास करे, तभी कश्मीर शान्त रह सकता है और तभी पाकिस्तान भी हिंसा की आग में जलने से बच सकता है। साथ ही पाकिस्तान अपने अधीन कश्मीरी हिस्से को तत्काल खाली करे। पाकिस्तान हाफिज सईद और दाऊद इब्राहिम जैसे भारत के दुश्मनों को पनाह भी देता रहे और अमन की दुआ भी करे, यह सम्भव नहीं हो सकता।

8 जनवरी, 2013 को युद्ध विराम का उल्लंघन कर पाकिस्तान ने भारत के दो जवानों की बर्बरतापूर्वक हत्या कर दी, जिससे भारत और पाकिस्तान के बीच शान्ति प्रक्रिया पटरी से उतर गई। दोनों देशों के बीच नई वीजा नीति शुरू की जानी थी जिसमें 65 वर्ष से अधिक उम्र के लोगों को 'वीजा ऑन अराइवल' देना तय किया गया था, जिसे स्थगित कर दिया गया। सांस्कृतिक आदान–प्रदान पर भी तात्कालिक प्रभाव से रोक लगा दी गई। इन सबका मूल कारण पाकिस्तान की शत्रुतापूर्ण कार्यवाही कही जाएगी।

मई, 2013 के चुनाव में पाकिस्तान के प्रधानमन्त्री नवाज शरीफ को प्राप्त मजबूत जनादेश के पश्चात् प्रधानमन्त्री डॉ. मनमोहन सिंह ने अपने बधाई–सन्देश में पाकिस्तान की नई सरकार के साथ द्विपक्षीय सम्बन्धों के नए अध्याय लिखने हेतु कार्य करने की इच्छा व्यक्त की। प्रधानमन्त्री डॉ. मनमोहन सिंह ने 29 सितम्बर, 2013 को न्यूयॉर्क में यूएनजीए के दौरान पाकिस्तान के प्रधानमन्त्री नवाज शरीफ के साथ मुलाकात की। भारत के विरुद्ध लगातार जारी आतंकवाद के मुद्दे को उठाने के अतिरिक्त प्रधानमन्त्री ने मुम्बई हमले के सभी अपराधियों पर शीघ्र न्यायिक कार्यवाही करने की आवश्यकता पर जोर दिया।

3.16 भारत की नई सरकार की पाकिस्तान के प्रति सकारात्मक पहल –

26 मई, 2014 की प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी ने अपने शपथ ग्रहण समारोह में पाकिस्तान के प्रधानमन्त्री नवाज शरीफ को आमन्त्रित किया था जिससे लगा कि दोनों देशों में बातचीत एवम् वार्ताओं का सिलसिला शुरू होगा, किन्तु पाकिस्तानी हाई कमिश्नर द्वारा अलगाववादी हुर्रियत नेताओं से मुलाकात के बाद 25 अगस्त, 2014 को इस्लामाबाद में होने वाली विदेश सचिव स्तर की बातचीत को भारत ने रोक दिया। 26–27 नवम्बर, 2014 को काठमाण्डू में आयोजित 18वें सार्क सम्मेलन में भी मोदी–शरीफ के मध्य कोई बातचीत नहीं हुई।

भारत और पाकिस्तान के बीच सम्बन्धों में होने वाली हर नई शुरुआत ढ़ाक के तीन पात ही साबित हो रही है। क्रिसमस (25 दिसम्बर, 2015) के दिन प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी जब नवाज शरीफ को उनके जन्मदिन की बधाई देने और उनकी नातिन की शादी पर आशीर्वाद देने अचानक लाहौर पहुँचे, तो यह महीने भर चली उस अथक कूटनीतिक कवायद का निर्णायक पल साबित होता दिख रहा था जिनसे गुजरते हुए दोनों देश एक बार फिर बातचीत की प्रक्रिया में शामिल हो सके थे। किन्तु हफ्ते भर बाद ही नए वर्ष के दिन (1 जनवरी, 2016) यह उत्साह एकदम चकनाचूर हो गया जब सीमा पार से पठानकोट में पाकिस्तान सशस्त्र आतंकवादी हमला किया।

पाकिस्तान ने इसके बाद लगातार कश्मीर में आतंकवादियों की घुसपैठ कराई और हमारे आन्तरिक मामलों मे हस्तक्षेप का प्रमाण दिया। केन्द्र सरकार लगातार प्रयासरत है कि वहाँ शान्ति बहाल हो, लेकिन कश्मीरी आतंकियों के पाकिस्तान में बैठे सरगना उन्हें भारतीय फौजों के खिलाफ न केवल उकसा रहे हैं, अपितु सैन्य और आर्थिक सहायता भी पहुँचा रहे हैं। पठानकोट हमले के पश्चात पाकिस्तान समर्पित आतंकवादियों ने कश्मीर के उड़ी सेना शिविर पर हमले किए जिसमें 20 से अधिक भारतीय वीरगति को प्राप्त हुए। उसकी प्रतिक्रियास्वरूप भारतीय सेना द्वारा पाक अधिकृत कश्मीर में सर्जिकल स्ट्राइक किया।

भारत–चीन सम्बन्ध (India-China Relations)

3.17 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Perspective)–

1950 के दशक में लगातार और बड़े जोर–शोर से 'हिन्दी–चीन भाई–भाई' का नारा मुखर किया गया था और बारम्बार भारत और चीन के बीच हजारों वर्ष पुराने सांस्कृतिक सम्बन्धों का उल्लेख होता रहता था। भारत (साम्यवादी खेमे के बाहर) पहला जनतान्त्रिक देश था जिसने जनवादी चीन को मान्यता दी थी। पण्डित नेहरू ने अपने मित्र एवं सहयोगी के. एम. पाणिक्कर को भारतीय राजदूत के रूप में चीन भेजा था। भारत ने ही चीन को सुरक्षा परिषद् में उसकी स्थाई सीट दिलाने की मुहिम में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया था। नेहरू और कृष्ण मेनन के प्रयत्नों से ही बान्डुंग शिखर सम्मेलन में चीन को आमन्त्रित किया गया था। तिब्बत के मसले पर भारत ने इस क्षेत्र में चीन की सम्प्रभुता स्वीकार कर पंचशील समझौते पर हस्ताक्षर किए। तब यह लगा था कि सीमा विवाद के बारे में मतभेद के बावजूद दोनों देशों के सम्बन्ध सद्भावपूर्ण बने रहेंगे। जिनेवा शान्ति सम्मेलन में हिन्द–चीन संकट को निपटाने के लिए चीनी राजनयिकों को भारत का समर्थन प्राप्त हुआ और किसी को इस बात का आभास नहीं था कि स्थिति इतनी जल्दी बिगड़ेगी। अधिकांश भारतीयों को 1962 में यह लगा कि चीन ने भारत के साथ विश्वासघात किया है। चीन ने अचानक सीमा विवाद की आड़ में भारत पर आक्रमण कर करोड़ों भारतीयों को हतभ्रत कर दिया था।

सन् 1962 में भारत–चीन सीमा युद्ध के दूरगामी परिणाम सामने आये। इससे पूर्व तक भारत यह दावा करता रहा था कि एशिया में दो ही बड़ी ताकते हैं एवम् दो अलग–अलग हजारों साल पुरानी सभ्यताएं भारत एवम् चीन, जिनके अपने–अपने सांस्कृतिक प्रभाव क्षेत्र हैं। इस युद्ध के बाद यह बात खुलकर सामने आई कि गुटनिरपेक्ष अफ्रीकी–एशियाई बिरादरी में भारत बिल्कुल अकेला पड़ गया। भारत के सुनियोजित आर्थिक विकास की सारी योजनाएं गड़बड़ा गई और खस्ता हाल भारत अन्तर्राष्ट्रीय रंगमंच पर पहले जैसी प्रभावी भूमिका भी निभाने में असमर्थ हो गया।

ब्रिटिश शासनकाल में मैकमोहन नाम के अंग्रेज सर्वेक्षक अफसर ने उस वक्त चीन–भारत के बीच सीमाओं का निर्धारण कर दिया था। यह याद रखने लायक है कि शिमला समझौते में जहाँ दोनों पक्षों अर्थात् ब्रिटिश भारत और चीन ने इस सीमा को मान्यता दे दी थी, लेकिन चीन ने इसे मन से कभी भी स्वीकार नहीं किया था।

यह बात रेखाँकित करना बेहद जरूरी है कि जहाँ तक चीन के राष्ट्रीय गौरव और उसकी पारम्परिक सीमाओं को अक्षत् रखने का प्रश्न है, इस बारे में चीन की सभी सरकारें हमेशा एक मत रही हैं, वे साम्राज्यवादी हों, राष्ट्रवादी, साम्यवादी या माओवादी। जनवादी चीन को यह आशा थी कि आजादी के बाद भारत की सरकार का आचरण ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार के उत्तराधिकारियों जैसा नहीं रहेगा और तिब्बत तथा हिमालयी सीमांत में वह चीनी दावों को आसानी से स्वीकार कर लेंगे और जो उसने गंवाया था, उसे वह वापस प्राप्त कर लेगा। यह उम्मीद इसलिए भी थी कि चीन की आजादी की लड़ाई के दौरान भारत की कांग्रेस पार्टी ने चीन के मुक्ति संग्राम के साथ अपना सहयोग प्रदर्शित किया था।

3.18 स्वतन्त्र भारत और चीन (Independent India & China)–

प्रारम्भिक चरण – चीन के प्रति भारत का दृष्टिकाण प्रारम्भ से ही मित्रतापूर्ण था। भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन काल में पं. नेहरू भारत और चीन की मित्रता पर बल देते रहे थे। अक्टूबर 1949 की साम्यवादी क्रान्ति का भारत ने समर्थन किया। भारत ने चीन को राजनायिक मान्यता दी एवं संयुक्त राष्ट्र संघ में चीन को मान्यता दिलाने का भरसक प्रयास किया। भारत ने तिब्बत में चीन की प्रभुसत्ता को स्वीकार किया, जो भारत की भारी भूल थी। समझौते में पंचशील के सिद्धान्तों में विश्वास प्रकट किया गया। 1956 में तिब्बत के खम्पा क्षेत्र में चीनी शासन के प्रति विद्रोह हो गया जो 1959 तक चला। इन विद्रोह को दलाईलामा का समर्थन प्राप्त था। चीनी सरकार ने इसे कुचल दिया। 31 मार्च 1959 को दलाईलामा ने भारत में शरण ली। चीन ने इसे शत्रुतापूर्ण कार्य की संज्ञा दी।

देश के प्रथम प्रधानमन्त्री इस बात के प्रति सचेत हुए कि हिमालयी क्षेत्र में और तिब्बत के क्षेत्र में सभी चीनी दावों को बिना शर्त स्वीकार करना भारत के लिए बेहद नुकसानदेह हो सकता है। इस तरह नेहरू ने सामरिक सन्दर्भ में वह तमाम् मैत्री पूर्ण सम्बन्धों और परम्पराओं के बावजूद चीन और भारत के बीच एक भू–भाग का, मध्यस्थ पट्टी के रूप में होना परमावश्यक माना। नेपाल को एक 'बफर' राज्य के रूप में महत्त्वपूर्ण समझा गया और तिब्बत की भी ऐसी ही सामरिक

उपयोगिता थी। सन् 1950 में चीन द्वारा तिब्बत पर कब्जा करने से नेहरू ने रणनीति के तहत पंचशील की नीति को चीन के साथ विवादों के शान्तिपूर्ण समाधान के लिए उपयोगी समझा था।

तिब्बत को लेकर भारत–चीन रिश्तों में खटास –

1956 में जब किशोर दलाई लामा भारत यात्रा पर आए और उन्होंने तिब्बत लौटने की अनिच्छा दिखलाई, तब नेहरू ने उन्हें समझा–बुझा कर वापस भेज दिया कि कहीं चीन इससे नाराज न हो जाए। जब तिब्बत में साम्यवादी चीन के बढ़ते अत्याचारों से त्रस्त दलाई लामा अपने समर्थकों के साथ सन् 1959 में पुनः शरणार्थी के रूप में भारत पहुँचे तो चीन ने इसे शत्रुतापूर्वक कार्यवाही समझा। जाहिर है कि तिब्बत से इस तरह दलाई लामा का पलायन, चीन को मानवाधिकारों के उल्लंघन के लिए अपराधी के रूप में कटघरे में खड़ा करने वाली कार्यवाही थी।

भारत–चीन के बीच सीमा विवाद और बेनतीजा वार्ताओं का दौर –

भारत और चीन के बीच सीमा विवाद के समाधान के लिए राजनयिक वात्ताओं के कई दौर चले जिनमें से कुछ अधिकारी स्तर पर सम्पन्न हुए और कुछ को शिखर वार्ताएँ कहा जा सकता हैं। दुर्भाग्यवश इनमे गतिरोध बना रहा और जरा भी सकारात्मक प्रगति नहीं हो सकी और किसी भी तरह के समझौते नहीं हो सके। भारत अपनी भूमि एक इंच भी चीन को देने को तैयार नहीं था। चीन का मानना था कि दोनों देशों में एशियाई भाईचारे और तीसरी दुनिया की एकता के आधार पर होना चाहिए। जब कि भारत का जोर पश्चिमी अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों और उन संधियों–समझौतों पर रहा, जिन्हें जनवादी चीन सिरे से नकारता रहा था। आज तक ऐसी बेनतीजा वार्ताऐं जारी हैं। बल्कि अब तो चीन अधिक आक्रामक और विस्तारवादी रवैया अपनाकर आक्रामक कार्यवाही में संलग्न है। 2017 में भारत–भूटान–चीन के मध्य अवस्थित डोकलाम पर चीनी अतिक्रमण के प्रयास एवं सैन्य गतिविधियों का भारत ने दृढ़ता से कूटनीतिक व सैन्य विरोध किया, परिणामस्वरूप चीन को अपने इस अतिक्रमण से पीछे हटना पड़ा व दोनों पक्षों के बीच इसके कूटनीतिक समाधान पर सहमति बनी। ज्ञातव्य है कि डोकलाम पर चीन का रूख सदैव अतिक्रमणकारी रहा है। इस पठारी क्षेत्र में चीन के सड़क मार्ग बनाने के प्रयास के कारण विवाद उत्पन्न हुआ।

चीन की विस्तारवादी नीति –

चीन ने हिमालयी पठार में पचास हजार वर्ग किलोमीटर से भी अधिक विस्तृत भू–भाग पर पहले ही कब्जा कर लिया था। जहाँ उसने सामरिक महत्त्व का सड़क निर्माण पूरा कर लिया था और बड़े पैमाने पर अपनी फौजें तैनात कर दीं थी। नेहरू इस बात से अनभिज्ञ न थे कि इन सब के बाद चीन ने लद्दाख के अक्साई चीन प्रदेश पर भी अपना कब्जा कर लिया था।

भारतीय भू–भाग पर अचानक अतिक्रमण –

सन् 1962 में चीन द्वारा युद्ध शुरू किया गया, तब यह बात साफ हो गई कि भारतीय सैनिक युद्ध के लिए तैयार नहीं थे। चीनी फौंजें हर मोर्चे पर तेजी के साथ आगे बढ़ी और उनका मुकाबला करते हुए संसाधनों व सैन्य साजो सामान के अभाव में भारतीय सैनिक उनका बेहतर मुकाबला ना कर सके। संकट की इस घड़ी में उत्कट देश प्रेम का ज्वार ऊफान पर आया और असाधारण भारतीयों ने त्याग और बलिदान की अनेक अनूठी मिसालें पेश की। लगभग एक महीने बाद चीन ने अपने सभी सामरिक राजनयिक उद्देश्य पूरा करने के बाद एक तरफा युद्ध विराम की घोषणा की और कुछ पीछे हट गया।

इस प्रकार सन् 1962 से भारत चीन के बीच स्थाई रूप से तनावपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो गए। अपनी विस्तारवादी नीति पर चीन आज तक कायम है और भारत के चारों ओर सामरिक घेरेबन्दी कर रहा है। फिर चाहे वह हिमालय हो या समुद्र मार्ग।

चीनी प्रभाव के सन्तुलन हेतु भारत–रूस सम्बन्ध विकसित –

जब तक सन् 1962 के भारत–चीन सीमा युद्ध के नतीजों का प्रश्न है, इसके अनेक दूरगामी परिणाम सामने आये। चीन में माओ ने साम्यवादी विकास का जो मॉडल अपने 'आविष्कार' के रूप में सामने रखा था वह सिर्फ एक विकल्प था। इससे कहीं अधिक आकर्षक विकल्प भारत ने पेश किया था जिसने अपने विकास के लिए सशस्त्र छापामार युद्ध का नहीं, बल्कि शान्पूिर्ण मिश्रित अर्थव्यवस्था वाला जनतान्त्रिक विकल्प चुना था।

यही कारण रहा कि चीन के उग्रवादी और विस्तारवादी रवैये के विरुद्ध सोवियत रूस को भारत के प्रति झुकाव बढ़ता चला गया। चूँकि चीन और रूस के मध्य भी सीमा विवाद था। अतः रूस ने सन्तुलन के रूप में सहायता हेतु भारत को चुना। रूस भारत मैत्री धीरे–धीरे परवान चढ़ने लगी। आज रूस–चीन की तुलना में अधिक स्वाभाविक मित्र है जो हर संकट के समय भारत के साथ खड़ा रहता है। भारत–पाक या फिर भारत–चीन के मध्य जब कभी तनाव पैदा हुआ रूस ने हमेशा भारत का साथ दिया। परमाणु ईंधन आपूर्ति, तकनीकों का हस्तान्तरण और सामरिक साजो–सामान की पूर्ति वह लगातार करके भारत को सुदृढ़ सहयोग प्रदान कर रहा है।

रस्मी समझौते –

यह दावा किया जाता रहा है कि सीमा विवाद को विस्फोटक बनने से बचाने के लिए परस्पर दोनों देशों के बीच भरोसा बढ़ाने वाले एक समझौते पर हस्ताक्षर किए जा सकते हैं। लेकिन चीनी सेना के अधिकारी यह स्पष्ट कह चुके हैं कि ऐसा कोई भी समझौता 'राजनीतिक' फैसला ही समझा जाना चाहिए – राजनयिक रस्म अदायगी – जिसका कोई असर जमीनी हकीकत पर या सामरिक समीकरण पर कोई असर नहीं

होगा। यह भी न भूलें कि चीन की सेना की तुलना भारतीय सेना से नहीं की जा सकती जो निर्वाचित जनप्रतिनिधियों के आदेशानुसार काम कर सकती है। चीन की जनमुक्ति सेना और साम्यवादी पार्टी का रिश्ता बहुत घनिष्ठ और जटिल है, उसके नजरिये को वहाँ की सरकार खारिज नहीं करती है।

जल विवाद –

चीन के साथ भारत के हितों का टकराव सीमा विवाद तक सीमित नहीं है। जल विवाद भी कम विकट नहीं है। चीन की दक्षिण से उत्तर की ओर जल प्रवाहित करने की महत्त्वाकांक्षी परियोजना जगजाहिर है। ब्रह्मपुत्र, जिसे चीन में यारलुंग सांगपो कहते हैं, ऊँचे पहाड़ों में दैत्याकार बांध निर्माण कर चीन अपनी जल सुरक्षा तो सुनिश्चित कर रहा है इससे समस्त भारतीय उपमहाद्वीप की जल सुरक्षा तथा पर्यावरण जोखिम में पड़ रही है। इस विषय में भारत को तकनीकी जानकारी देने या उसके साथ परामर्श में चीन परहेज करता है, जिससे तरह–तरह की आशंकाऐं उत्पन्न हो चुकी हैं।` भारत इस मुद्दे को कई बार उठा चुका है। लेकिन सिवाय मौखिक आश्वासनों के हमारे हाथ कुछ नहीं लगा।

3.19 विकास के सोपान पर सम्बन्ध (Relationship On the Ladder of Development) –

भारत में जनता पार्टी की सरकार के 1977 में सत्तारूढ़ होने और चीन में माओत्तर नेताओं द्वारा बागड़ोर सम्भालने के बाद दोनों देशों ने विगत बातों को भूलकर नये सिरे से मधुर सम्बन्ध स्थापित करने की दिशा में काफी प्रयास किये हैं। अनेक कूटनीतिक माध्यमों से भारत को पीकिंग से इस बात के संकेत मिले कि वह भारत के साथ सम्बन्ध सुधारने का इच्छुक है। सन् 1975 में टेबिल–टेनिस की प्रतियोगिता कोलकाता में हुई, जिसमें चीनी खिलाड़ियों के एक दल ने भाग लिया। जनवरी, 1978 में वांग–पिंग–नान के नेतृत्व में एक उच्च स्तरीय चीनी प्रतिनिधि मण्ड़ल भारत आया। इसके बाद व्यापार–वाणिज्य प्रतिनिधि मण्ड़लों का दौरा हुआ और दोनों देशों के बीच सन् 1978 में 1 करोड़ 20 लाख का व्यापार हुआ। सितम्बर 1978 में चीन के कृषि वैज्ञानिकों ने भारत यात्रा की और न्यूयार्क में विदेश मन्त्री वाजपेयी ने चीनी विदेश मन्त्री हुआंग हुआ से भेंट की। 1 अक्टूबर, 1978 को चीन की स्थापना की 29वीं वर्षगांठ पर उपराष्ट्रपति बी.डी. जत्ती उपस्थित थे। नवम्बर, 1978 में मृणालिनी साराभाई के नेतृत्व में भारतीय नृत्य मण्ड़ली का चीन में भव्य स्वागत किया गया। 12 फरवरी, 1979 में प्रारम्भ होने वाली अपनी चीनी यात्रा को विदेश मन्त्री वाजपेयी ने 'टोही मिशन' की संज्ञा दी थी। विदेश मन्त्री वाजपेयी के अनुसार उनकी पीकिंग यात्रा का उद्देश्य लेन–देन करना नहीं अपितु यह जानना था कि इतने वर्षों के बिगड़े सम्बन्ध के बाद आज चीन में हवा क्या है?इसके बाद भी 1980 से लेकर आज तक भारत–चीन के विभिन्न प्रतिनिधि मण्ड़ल लगातार वार्ताएँ और विभिन्न समझौते कर वाणिज्यिक – व्यापारिक समझौते कर रहे हैं। 1988 में प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने चीन यात्रा की, जिसने विगत 26 वर्षो से भारत–चीन संबंधों पर जमी बर्फ को पिघलाने का काम किया। यह सहमति बनी कि विवादास्पद मुद्दों को एक तरफ रखकर पहले व्यापार–वाणिज्य–संस्कृति के क्षेत्रों में संबंधों का विस्तार किया जाए तथा विश्वास बहाल होने के बाद सीमा विवाद को भी सुलझाया जाए।

3.20 आर्थिक सम्बन्ध (Economic Relationship)–

आर्थिक रिश्तों के बारे में भी गम्भीरता से सोचने की जरूरत है। यह खाता भारत के प्रतिकूल और असन्तुलित है। 250 अरब डालर के करीब पहुँचा व्यापार लगभग इकतरफा है इससे चीन का दबाव निरन्तर बढ़ता जा रहा है। चीन हमारे लिए नम्बर एक का साझेदार है परन्तु चीन में हमारा व्यापार दसवें स्थान पर भी नहीं है। यद्यपि यह सही है कि जब सारा विश्व आर्थिक मन्दी की चपेट में है तब हम किसी भी तरह का जोखिम नहीं उठा सकते और चीन के साथ अपने व्यापार को यथावत् जारी रखना देश हित में है। चीन दुनिया का सबसे बड़ा बाजार है और सस्ते श्रम का विपुल भण्ड़ार है। तकनीक के क्षेत्र में भी वह भारत की तुलना में काफी अधिक आगे है। खाद्य सुरक्षा से लेकर ऊर्जा सुरक्षा तक अनेक उदाहरण जो इस तथ्य को पुष्ट करते हैं। अतः हम चीन के आर्थिक साझेदारी तो निर्वाहित करना चाहेंगे लेकिन सख्त व्यापार सन्तुलन की आवश्यकता अवश्य ही बनी हुई है।

चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग की भारत यात्रा –

राष्ट्रपति जिनपिंग 17 सितम्बर, 2014 को तीन दिवसीय भारत यात्रा पर सर्वप्रथम अहमदाबाद पहुँचे। वहाँ प्रधानमन्त्री मोदी की उपस्थिति में चीन और गुजरात सरकार के बीच तीन करार सम्पन्न हुए। पहला समझौता ग्वांगडोंग की तर्ज पर गुजरात का विकास, दूसरा ग्वांगझू की तरह अहमदाबाद का विकास तथा तीसरा वडोदरा के पास औद्योगिक पार्क को विकसित करने से सम्बन्धित है। दोनों देशों के बीच 18 सितम्बर को 12 करार हुए। कैलाश–मानसरोवर के लिए नया रास्ता खोलने पर सहमति बनी। चीन भारत में लगभग 1,200 अरब रूपये का निवेश पाँच वर्ष में करने के लिए राजी हुआ। बुलेट ट्रेन चलाने, रेल्वे स्टेशनों को आधुनिक बनाने पर भी चीन का भारत को सहयोग मिलेगा, लेकिन दोनों पक्षों में सीमा विवाद पर कोई समझौता नहीं हो सका।

भारत के प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी की चीन यात्रा –

प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी 14 से 16 मई, 2015 तक चीन की यात्रा पर रहे। दोनों देशों के मध्य 10 अरब डॉलर के 24

समझौतों पर हस्ताक्षर हुए। 16 मई को भारत और चीन की कम्पनियों के बीच 22 अरब डॉलर के 26 समझौते हुए। मोदी ने चीन के निवेशकों को भारत में निवेश के लिए आमन्त्रित किया। मोदी ने चीन के नागरिकों को ई–वीजा देने की घोषणा की। कैलाश–मानसरोवर जाने वालों के लिए नाथूला मार्ग जून 2015 से खोल दिया गया है।

निष्कर्ष (Conclusion)–

संक्षेप में कहा जा सकता है कि यदि भारत और चीन का सीमा समझौता हो जाये तो निःसन्देह अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति और क्षेत्रीय राजनीति पर उसका गम्भीर प्रभाव होगा और इसके व्यापक एवम् दूरगामी परिणाम होंगे। भारत–चीन सीमा पर आमतौर पर शान्ति बनी है। दोनों देशों ने सीमा पर शान्ति और अमन से सम्बद्ध करार (1993) तथा विश्वासोत्पादक उपायों से सम्बद्ध करारों (1996) के अनुसरण में शान्ति और अमन बनाए रखने के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को दोहराया भी है। कारगिल मुद्दे पर चीन ने पाकिस्तान का समर्थन नहीं करके भारत के प्रति सद्भाव प्रदर्शित किया था। आज अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ भी कुछ ऐसी बदली हैं कि भारत और चीन का करीब आना अवश्यभावी हो गया है। विश्व व्यवस्था में भारत की बढ़ती हैसियत, आर्थिक विकास व आधुतिक तकनीक खासकर आईटी के क्षेत्र में भारतीय पेशोवरों की विशेषज्ञता ये कुछ ऐसी कारण हैं जिनसे दोनों देश करीब आ रहे हैं। पिछले पाँच वर्षों में दोनों देशों के बीच व्यापार में कई गुना बढ़ोतरी हो चुकी है और अब धीरे–धीरे व्यापारिक सन्तुलन भी कायम हो रहा है। चीन ने सीमा विवाद के कई मुद्दों पर भारत का पक्ष करीब–करीब स्वीकार कर लिया है। उसने सिक्किम को भारत का हिस्सा मान लिया है और नाथू–ला दर्रा व्यापार के लिए खुल गया है। तथापि आने वाले वर्षों में भारत की कई क्षेत्रों में कड़ी प्रतिस्पर्धा भी चीन के साथ ही रहने वाली है।

भारत – नेपाल सम्बन्ध (India – Nepal Relations)

आज जिस क्षेत्र को दक्षिण एशिया कहा जाता है, उसकी ऐतिहासिक पहचान हिन्दुस्तान के ही रूप में रही है। भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश तो सन् 1947 तक, एक अविभाजित राज्य ही थे, जिसकी आजादी के लिए एक संयुक्त लड़ाई लड़ी गई थी। श्रीलंका और बर्मा (अब म्यांमार) भी ब्रिटिश साम्राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था में भारतीय उपमहाद्वीप के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़े रहे हैं। न केवल इन दो देशों में बड़ी संख्या में भारतीय आप्रवासी निवास करते थे, वहाँ के आर्थिक, सांस्कृतिक जीवन में असरदार भूमिका भी निभाते थे। यह भी सच है कि बर्मा हो या श्रीलंका, इनको कोई भी भारतीय 'विदेशी' नहीं समझता था। नेपाल को भी इन उदाहरणों से भिन्न नहीं कहा जा सकता।

3.21 आरम्भिक अवस्था (Initial Phase)

नेपाल हिमालय की पहाड़ियों में बसा हुआ एक छोटा–सा देश है। भारत व चीन के मध्य एक बफर स्टेट है। यह विश्व का एकमात्र हिन्दू राज्य था। वर्तमान में यहाँ जनतान्त्रिक धर्म निरपेक्ष शासन प्रणाली है। आधुनिक नेपाल के निर्माता पृथ्वी नारायण शाह (1723–1774) ने नेपाल के लिए कहा था यह देश दो चट्टानों के बीच खिले हुए फूल के समान है। हमें चीनी सम्राट के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखने चाहिए तथा हमारे सम्बन्ध दक्षिणी सागरों के सम्राट भारत से भी मधुर होने चाहिए। लेकिन अपने दो पड़ोसियों में से वह भारत को खतरे का अधिक बड़ा स्त्रोत मानता था। पिछले 200 वर्षों के इतिहास में नेपाल की विदेश नीति की प्रधान विशेषता यह रही है कि दोनों पड़ोसियों से सम्बन्ध अच्छे रखो।

भारत के उत्तर–पूर्व में स्थित नेपाल सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। चीन द्वारा तिब्बत पर कब्जा कर लेने के बाद भारत–चीन सम्बन्धों में नेपाल की सामरिक स्थिति का राजनीतिक महत्त्व बढ़ गया है। उत्तर में भारत की सुरक्षा आज एक बड़ी सीमा तक नेपाल की सुरक्षा पर निर्भर करती है। पण्डित नेहरू ने 17 मार्च, 1950 को कहा था, "नेपाल पर किये जाने वाले किसी भी आक्रमण को भारत सहन नहीं कर सकता। नेपाल पर कोई भी सम्भावित आक्रमण निश्चित रूप से भारतीय सुरक्षा के लिए खतरा होगा।" सन् 1956 में भारत के राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने अपनी नेपाल यात्रा के दौरान कहा था कि नेपाल की शान्ति और सुरक्षा के लिए कोई भी खतरा भारतीय शान्ति और सुरक्षा के लिए खतरा है। नेपाल के मित्र हमारे मित्र हैं और नेपाल के शत्रु हमारे शत्रु हैं।

3.22 ब्रिटिश काल (Nepal During British Period)

अन्तर्राष्ट्रीय कानून की दृष्टि से नेपाल हमेशा स्वाधीन बना रहा लेकिन नेपाल नरेश की स्वाधीनता अन्य भारतीय रजवाड़ों रियासतों की 'पराधीनता' से जरा भी भिन्न नहीं थी। नेपाल के महाराज को भी अपने दरबार में ब्रिटिश रेजिडेन्ट की नियुक्ति स्वीकार करनी पड़ती थी और ब्रिटिश प्रभुत्व (पैरामाउन्ट्सी) को स्वीकार कर ही यह पहाड़ी भूमिबद्ध राज्य अपने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का संचालन, ब्रिटिश भारतीय सरकार के निर्देशानुसार करता रहा था। नेपाल पूरी तरह औपनिवेशिक सरकार के अंकुश में था। घरेलू राजनीति में भी नेपाल नरेश स्वतन्त्र नहीं थे। असली शक्ति राणा वंश के निरंकुश प्रधानमन्त्रियों के हाथ में थी जो सेनाध्यक्ष भी होते थे। राणा वंश का शादी आदि का रिश्ता नेपाली राजवंश से तो था ही साथ ही अनेक भारतीय रजवाड़ों के साथ भी रहा है। इसी कारण अंग्रेजों ने सामन्तशाही नेपाल में बरकरार बनाए रखी थी।

3.23 भारत–नेपाल सीमा जुड़ाव (India Nepal Border Connectivity)–

भारत–नेपाल सीमा के पश्चिमी छोर को महाकाली अंचल में छोटी–बैताड़ी करनाली वाला अथवा उत्तरप्रदेश–बिहार को सैकड़ों मील छूता तराई वाला भू–भाग आम आदमी के लिए अदृश्य अन्तर्राष्ट्रीय सीमा कभी भी रोकने–टोकने वाली नहीं रही। इस पूरे इलाके में रहने वाले भारतीय और नेपाली खुशी–खुशी अपने को दोनों देशों की सन्तान समझते रहे हैं और भाषा, धर्म में समानता के कारण उनमें अन्तर करना बड़ा कठिन रहा है। नेपाल एक मात्र ऐसा विदेशी राष्ट्र है, जिसके नागरिक भारतीय सेना में भर्ती किए जाते हैं। यह बात उल्लेखनीय है कि आजादी के पहले नेपाल औपचारिक रूप से भारत का हिस्सा न रहने पर भी भारत के साथ उसके घनिष्ठ एवम् आत्मीय सम्बन्ध, पाकिस्तान, बांग्लादेश या श्रीलंका की तुलना में, कम महत्त्वपूर्ण नहीं थे। इसीलिए यह ब्रिटिश काल में भारत का रक्षित राज्य था, जो सहर्ष वैदेशिक सम्बन्धों में और प्रतिरक्षा के क्षेत्र में भारत सरकार की सलाह, स्वेच्छा से स्वीकार करता था।

3.24 नेपाल के साथ उलझनें (Complications With Nepal) –

विडम्बना यह है कि पाकिस्तान से इतर जो अन्य पड़ोसी देश हमारे मित्र हुआ करते थे, वे भी क्रमशः हमसे दूर होते चले गए हैं। नेपाल के साथ हमारे जितने घनिष्ठ – आत्मीय सांस्कृतिक सम्बन्ध हैं शायद ही किसी दूसरे देश के साथ हो सकते हैं। नेपाली नागरिक भारतीय सेना तक में भर्ती हो सकते हैं। लेकिन आज भारत के प्रति नेपाल की भाषा जितनी उग्र सुनने को मिलती है उतनी शायद ही पहले कभी सुनाई दी थी। कभी सन् 1950 की विषम सन्धि तनाव पैदा करती है तो कभी नदी जल–विवाद। भारत नेपाली भूमि में शरण लेने वाले तस्करों – आतंकवादियों को लेकर खिन्न रहता है तो नेपाली देशप्रेमियों की शिकायत मुनाफाखोर भारतीय व्यापारियों को ले कर भी है। स्वाधीन नेपाल का कहना कि उसके मित्रों या शत्रुओं का निर्णय भारत नहीं कर सकता, पर उसके लिए यह समझना भी जरूरी है कि भारत के मन में चीन या पाकिस्तान को ले कर आशंकाए पैदा होने के बाद नेपाल पहले जैसी सहायता–समर्थन की आशा भी नहीं कर सकता। भारत का दृष्टिकोण है कि नेपाल की स्थिरता और विकास का मॉडल भारतीय साँचे के अनुरूप हो। भारत द्वारा नेपाल की राजशाही को समर्थन देने की नीति ने भारत–नेपाल सम्बन्धों में काफी तनाव पैदा किया था। इसी तरह नेपाली माओवादियों को भारतीय माओवादियों के साथ रख, उनकी राजनीतिक भूमिका का आकलन भी हमारे लिए अनुकूल नहीं रहा। नेपाल में भारत के हितों को हम मात्र चीन के साथ उसके रिश्तों के चश्में से ही नहीं देख सकते। नेपाली समाज भारत से कम विविधता वाला नहीं। वहाँ भी आर्थिक विकास का असन्तुलन बहुत विकट है। अतीत की साझेदारी भरी यादों के सहारे हम भविष्य का ताना–बाना भी नहीं बुन सकते।

3.25 भारत–नेपाल सम्बन्ध 1950 की सन्धि (India Nepal Treaty - 1950)–

सन् 1947 में नेपाल के प्रधानमन्त्री की माँग पर भारत सरकार ने एक वरिष्ठ भारतीय राजनयिक को नेपाल भेजा, जिससे नेपाल का संविधान तैयार कराने में सहायता दी जा सके। लेकिन वहाँ जो संविधान बना वह राजशाही की निरंकुशता का अन्त करने वाला था, अतः नेपाल के राजाओं ने क्रियान्वित ही नहीं होने दिया।

भारत सरकार भी नेपाल के साथ एक नई सन्धि भी करना चाहती थी। सन् 1949 में सन्धि का एक मसौदा भी तैयार किया गया, परन्तु इसका भी कोई अन्तिम निष्कर्ष नहीं निकला, क्योंकि नेपाल सरकार भारत के प्रति शंकित थी। सन्धि की महत्त्वपूर्ण शर्त यह थी कि नेपाल में लोकतान्त्रिक प्रणाली स्थापित हो। तिब्बत में चीन की गतिविधियाँ बढ़ने से नेपाल की सुरक्षा के बारे में भारत की चिन्ता बढ़ गई और 17 मार्च, 1950 को प्रधानमन्त्री नेहरू ने संसद में कहा कि नेपाल पर कोई भी सम्भावित आक्रमण निश्चित रूप से भारत की सुरक्षा के लिए खतरा होगा। अन्त में अप्रेल, 1950 मे जनरल विजय शमशेर और एन.एम. दीक्षित ने नेपाल सरकार के प्रतिनिधि के रूप में भारत की यात्रा की और 30 जुलाई, 1950 को दोनों देशों के मध्य एक ऐतिहासिक सन्धि हुई, पर इसी बीच नेपाल में घटित घटनाओं के कारण भारत सरकार और नेपाल की राणा सरकार के सम्बन्धों में तनाव उत्पन्न हो गया।

3.26 नेपाल में राणाशाही का विरोध और भारत की भूमिका (Opposition of Monarchy in Nepal & Role Played by India)–

सन् 1950 में राणाशाही से मुक्ति के लिए प्रयास शुरू हुआ। 16 नवम्बर, 1950 को नेपाल के महाराजा त्रिभुवन ने राज परिवार के 14 सदस्यों के साथ अपने राजमहल का परित्याग कर भारत में शरण ली। राणा शमशेर के विरुद्ध गृहयुद्ध शुरू हो गया। यह विद्रोह भारत के भूभाग से ही संचालित किया गया। अन्त में भारत के सहयोग से ही नेपाल में राणाशाही का अन्त हुआ और नेपाल के महाराजा त्रिभुवन वास्तविक शासक बने तथा लोकतन्त्र की स्थापना हुई। इस समय पण्डित नेहरू ने कहा, "नेपाल की स्वतन्त्रता का सम्मान करते हुए भी हम नेपाल में कोई अव्यवस्था सहन नहीं कर सकते।"

भारत की सहायता से नेपाल सन् 1955 में संयुक्त राष्ट्र का सदस्य बना। नेपाल के विदेश मन्त्री ने 1 फरवरी, 1955 को एक भाषण में कहा कि नेपाल किसी भी दशा में भारत के विरुद्ध नहीं जाएगा। भारत ने नेपाल को अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त

कराने में बड़ी सहायता की और कहा कि वह नेपाल का सबसे बड़ा मित्र है।

3.27 नेपाली मामलों में चीन की अभिरुचि और भारत की धरती (Chinese Interest in Nepal Matters)

सन् 1959 में नेपाल के प्रधानमन्त्री कोइराला ने चीन की यात्रा की और चाऊ–एन–लाई को पुनः नेपाल आने के लिए आमन्त्रित किया। चीन एवम् नेपाल के मध्य एवरेस्ट पर्वत शिखर के बारे में एक समझौता भी हुआ जिसकी भारत में कड़ी आलोचना हुई। कोइराला मन्त्रिमण्डल कुछ ही समय बाद भंग कर दिया गया और नेपाली कांग्रेस के अनेक नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया, किन्तु इनमें से कुछ व्यक्ति भागकर भारत चले गये और वहीं से नेपाल में जन–आन्दोलन को संचालित करने तथा सफल बनाने का प्रयत्न करने में लगे रहे। नेपाल में यह समझा गया कि भारत द्वारा नेपाल नरेश विरोधी कार्य को प्रश्रय दिया जा रहा है। इससे दोनों देशों के आपसी सम्बन्धों में कटुता आ गई, जो काफी समय तक बराबर बनी रही।

भारत की चेतावनियों को अनसुनी करके तत्कालीन महाराजा महेन्द्र ने काठमाण्डू–ल्हासा मार्ग बनाने के सम्बन्ध में चीन से समझौता करके भारत के लिए खतरा उत्पन्न कर दिया। महाराजा महेन्द्र चीन यात्रा पर गये। उन्होंने भारत के ऐतिहासिक और अटूट सम्बन्धों का जिक्र किया किन्तु साथ ही चीन के साथ पुरातन सम्बन्धों की चर्चा की। जब सन् 1962 में भारत–चीन युद्ध प्रारम्भ हुआ तब नेपाल ने तटस्थता की नीति अपनाई, जिससे भारत में नेपाल के प्रति आशंका पैदा हुई।

3.28 सम्बन्धों की पुनर्स्थापना (Reestablishment of Relationship) –

चीनी आक्रमण के बाद भारत के लिए नेपाल में अपनी स्थिति सुदृढ़ करना आवश्यक हो गया। तत्कालीन गृहमन्त्री लाल बहादुर शास्त्री ने नेपाल की यात्रा की और सरल सौम्य नीति से नेपाल के अनेक सन्देह दूर किये। इसके बाद नेपाल महाराजा ने 13 दिन की भारत यात्रा की एवम् डॉ. राधाकृष्णन ने नेपाल की यात्रा की। इस समय नेपाल सरकार ने आश्वासन दिया कि नेपाल के मार्ग से भारत पर कोई आक्रमण नहीं होने दिया जाएगा। 23 सितम्बर, 1964 को नेपाल और भारत के मध्य एक समझौता हुआ। इसके अनुसार भारत ने नेपाल के सीमावर्ती कस्बे सगौली और मध्यपूर्वी नेपाल में अखोरा घाटी के बीच 128 मील लम्बी सड़क का निर्माण करेगा। काठमाण्डू से लेकर भारतीय सीमा में रक्सौल को जोड़ने वाली एक अन्य सड़क योजना एवम् कोसी योजना भी बनी। कोसी योजना का उद्देश्य नेपाल को बाढ़ से बचाना, बिजली पूर्ति करना एवम् सिंचाई से लाभ पहुँचाना था। इसके बाद भारत–नेपाल के मध्य परस्पर अनेक समझौते होते रहे और दोनों देशों के राजनयिक, नेता और विशेषज्ञ परस्पर एक–दूसरे के यहाँ आते जाते रहे। सन् 1971 के भारत–पाक युद्ध के बाद नेपाल पाक को लेकर काफी सतर्क हो गया। उसे यह भी समझ आ गया कि अब यह भारत सन् 1962 वाला नहीं है, अर्थात् दुर्बल और कमजोर देश नहीं अपितु सशक्त और मजबूत देश बन चुका है।

3.29 भारत–नेपाल आर्थिक–तकनीकी सम्बन्ध (Economic & Technological Relations)–

नेपाल के विकास कार्यों में सबसे अधिक धन भारत का ही लगा हुआ है। नेपाल को भारत से हर तरह का प्रशिक्षण, तकनीकी और गैर–तकनीकी सहायता मिलती है। कोलम्बो योजना के अन्तर्गत भारत ने अनेक नेपाली नागरिकों को प्रशिक्षण दिया है। भारत ने नेपाल की जिन परियोजनाओं के लिए सहायता दी है। उनमें कुछ प्रमुख हैं – 1. देवी घाट, त्रिशूल, करनाली, पंचेश्वर जल–विद्युत योजनाएं; 2. त्रिभुवन गणपथ, काठमाण्डू–त्रिशूली मार्ग, त्रिभुवन हवाई अड्डा; 3. काठमाण्डू–रक्सौल टेलीफोन संयन्त्र; 4. चत्र नहर परियोजना, कोसी और गंडक परियोजना; 5. भूवैज्ञानिक अनुसन्धान तथा खनिज खोजबीन का काम; 6. वीरगंज और हितौदा रेल निर्माण; तथा 7. काठमाण्डू घाटी के एक उपनगर पाटन में एक औद्योगिक बस्ती की स्थापना। नेपाल में भारत की प्रसिद्ध परियोजनाओं में से एक नेपाल के पूर्व–पश्चिम राजमार्ग पर कोहलापुर–महाकाली क्षेत्र में 22 पुलों का निर्माण भी शामिल है।

दिसम्बर, 1991 में भारत ने नेपाल के महान देशभक्त एवम् स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी वी.एच. कोइराला की पुण्यतिथि में 'भारत–नेपाल फाउण्डेशन' बनाने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। दोनों ही देश के अंशदान से स्थापित इस फाउण्डेशन के द्वारा द्विपक्षीय सहयोग को बढ़ावा दिया गया। दोनों देश औद्योगिक क्षेत्र में साझा उद्यम लगाने को भी सहमत हुए। इसके अन्तर्गत चीनी, कागज तथा सीमेण्ट पर विशेष ध्यान दिया गया। नेपाल के आग्रह पर भारत विराटनगर में वी.पी. कोइराला स्मृति मेडिकल कॉलेज, रंगेली में एक टेलीफोन एक्सचेंज, विराटनगर–झापा तथा चतरावीपुर मार्ग के निर्माण, जनकपुर–बीजलपुर रेल लाईन के नवीनीकरण और रक्सौल तक की रेल लाईन को बड़ी लाईन में परिवर्तित करने में व्यापक सहयोग दिया।

3.30 1950 में बनी द्विपक्षीय सन्धि की समाप्ति (Collapse of Bilaleral Treaty of 1950) –

1989 में भारत ने नेपाल के साथ व्यापार और पारगमन संधि की अवधि पूरी हो जाने पर उसका नवीनीकरण करने से मना कर दिया। सीमा शुल्क और जाँच सम्बन्धी कार्यों में

कठोरता बरती गयी। इस संधि के समापत होने के बाद दोनों देशों के बीच छोटे–छोटे मतभेदों से शुरू हुआ मामला अन्ततः गहरे तनाव में बदल गया।

भारत चाहता है कि नेपाल सरकार सन् 1950 की शान्ति व मैत्री सन्धि की पाबन्दियों का सम्मान करे या द्विपक्षीय रिश्तों का ताना–बाना फिर तैयार करे। सन् 1950 की सन्धि वह आधार है जिस पर भारत–नेपाल सम्बन्धों की नींव रखी गई थी। इसके अनुच्छेद 7 के अनुसार इस बात पर सहमति बनी थी कि "एक देश के नागरिकों को दूसरे देश में निवास, जायदाद की मिल्कियत, उद्योग–व्यापार में भागीदारी व घूमने–फिरने के समान अधिकार पारस्परिक आधार पर दिये जायेगे।" परिणामस्वरूप नेपाली नागरिकों को भारत में रहने, घूमने–फिरने, काम–धन्धा करने, सरकारी नौकरियाँ करने की छूट है। नेपाल में भी भारतीयों को सन् 1967 तक ऐसे ही अधिकार मिले थे, लेकिन इसके बाद उनके लिए वर्क परमिट लेने की शर्त लगा दी गई। भारत के अनुसार इन कदमों से भारतीय नागरिकों व भारतीय सामान के साथ विशेष व्यवहार की शर्त का उल्लघंन हुआ। नेपाल ने ये प्रतिबन्ध लगाने से पहले भारत से मशविरा भी नहीं किया था। जबकि सन्धि के हिसाब से नेपाल अपने नागरिकों और भारतीयों के बीच भेदभाव नहीं कर सकता। भारत ने अपने यहाँ रह रहे करीब 50 लाख नेपालियों पर ऐसा कोई प्रतिबन्ध आज तक नहीं लगाया है।

भारत नेपाल का सबसे बड़ा व्यापारी भागीदार तथा एफ. डी.आई. का स्त्रोत बना हुआ है। जुलाई, 2014 को समाप्त नेपाली वित्तीय वर्ष के आँकड़ों के अनुसार भारत के साथ द्विपक्षीय व्यापार नेपाल के कुल बाहरी व्यापार का 66.5 प्रतिशत दर्ज था। नेपाल में कुल विदेशी निवेश का 46 प्रतिशत हिस्सा भारत का है।

3.31 भारत–नेपाल के मध्य मतभेद (Disputes Between India & Nepal) –

1. **नेपाल का स्वयं को शान्ति क्षेत्र घोषित करने का दबाव** – भारत और नेपाल के सुरक्षा सम्बन्धी हित समान होने पर भी उनके सम्बन्धों में अत्यधिक उतार–चढ़ाव रहा है। अनेक बार भारतीय हितों की उपेक्षा करते हुए अर्थात् भारतीय हितों के विरुद्ध नेपाल ने साम्यवादी चीन के साथ समझौते किये। भारत और नेपाल में गलतफहमियाँ विद्यमान रही हैं और वस्तुओं के लिए पारगमन की सुविधाओं और व्यापार संचालन के सम्बन्ध में मतभेद रहे हैं। नेपाल में चीन की गतिविधियाँ भारत विरोधी और ध्वंसात्मक रही हैं। नेपाल द्वारा काठमाण्डू–ल्हासा सड़क मार्ग बनाने के सम्बन्ध में चीन के साथ समझौता स्पष्टतः भारत विरोधी कदम था। एवरेस्ट पर्वत के सम्बन्ध में नेपाल–चीन में प्रारम्भिक समझौता भारत के प्रति विश्वासघात था। आजकल नेपाल का आग्रह है कि नेपाल को "शान्ति क्षेत्र" घोषित किया जाये। भारत सरकार का दृष्टिकोण यह है कि केवल नेपाल ही क्यों सम्पूर्ण उपमहाद्वीप को "शान्ति क्षेत्र" घोषित किया जाये। भारत इसे अपना विरोधी प्रस्ताव मानता है। उनके अनुसार यह अप्रत्यक्ष रूप से भारत पर एक प्रकार का दोषारोपण है कि भारत नेपाल के लिए खतरा है। नेपाल को स्वयं को "शान्ति क्षेत्र" घोषित कराने के पीछे प्रधान उद्देश्य भारत के प्रभाव और विशिष्ट स्थिति को नकारना है, जिसे वह अपने राष्ट्रीय व्यक्तित्व की खोज में बाधक मानता है। यह उसकी भारत और चीन के मध्य ऐतिहासिक सन्तुलनकारी भूमिका का एक रूप भी है, नेपाल इस प्रस्ताव को भारत से अधिकाधिक आर्थिक सहायता पाने के लिए एक सौदेबाजी के आधार के रूप में भी उपयोग करना चाहता है।
2. **राज परिवार की हत्या और आपातकाल** – नेपाल नरेश ज्ञानेन्द्र ने जून, 2001 में अपने भाई राजा वीरेन्द्र और उनके पूरे परिवार की हत्या के बाद बहुत ही रहस्यमय एवम् सन्देहास्पद परिस्थितियों में नेपाल की राजगद्दी सम्भाली थी। नरेश बनने के बाद से ही ज्ञानेन्द्र ने संसदीय लोकतन्त्र को नुकसान पहुँचाने, संसद भंग करने और अपनी मर्जी से प्रधानमन्त्रियों को बर्खास्त करने और उन्हें नियुक्त करने का कार्य किया। गौरतलब है कि नेपाल में ज्ञानेन्द्र द्वारा यह सब तब किया जा रहा था जब नेपाल में माओवादियों द्वारा खूनी गृहयुद्ध जारी था। 1 फरवरी, 2005 को नरेश ने नेपाल में आपातकाल लागू कर लोकतन्त्र का विध्वंस करते हुए पूर्ण राजशाही स्थापित कर दी।
3. **नेपाल में लोकतन्त्र की हत्या** – जनवरी, 2005 में राजनीतिक सत्ता अपने हाथ में लेने के बाद से राजा ज्ञानेन्द्र की सारी राजनीतिक कार्यवाहियाँ प्रतिक्रियावादी रही हैं। सत्ता के अधिग्रहण ने जहाँ माओवादी आन्दोलन को मजबूत किया, वहीं राजनीतिक दमन व उत्पीड़न की नीति से राजा एवम् उनके राजनीतिक दावों में मध्य गहरी खाई पैदा कर दी। राजा ज्ञानेन्द्र की सत्ता का केन्द्र बने रहने की प्रबल इच्छा का ही परिणाम है कि नेपाल समस्त राजनीतिक दल व माओवादी एक मंच पर आ गये। नेपाल में लोकतन्त्र बहाली के लिए बढ़ते अन्तर्राष्ट्रीय दबाव और राजशाही के विरुद्ध प्रबल जन–आन्दोलन के आगे झुकते हुए राजा ज्ञानेन्द्र को 24 अप्रेल, 2006 को पुरानी संसद को बहाल करने की घोषणा करनी पड़ी। नई संसद ने राजा ज्ञानेन्द्र से करीब–करीब सारे अधिकार छीन लिये। संसद सर्वोच्च होगी और माओवादियों ने अंतरिम सरकार में शामिल होने का फैसला किया।

3.32 नेपाल के लोकतन्त्र की राह (Nepal on the Path of Democracy)–

नेपाल में 11 वर्षों से चला आ रहा माओवादियों का सशस्त्र संघर्ष 21 नवम्बर, 2006 को समाप्त हो गया, जब राजनीतिक दलों की अंतरिम सरकार के साथ माओवादियों ने समग्र शान्ति समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये। दोनों पक्ष इस बात के लिये सहमत हुए कि नेपाल नरेश के सभी अधिकार समाप्त हो जायेगे तथा शाही महल से जुड़ी समस्त सम्पत्ति सरकार की होगी। माओवादियों के सशस्त्र आन्दोलन के चलते हुए हिंसक घटनाओं में लगभग 20 हजार से अधिक लोग पिछले डेढ़ दशक में मारे जा चुके हैं। भारत ने समझौते का स्वागत करते हुए कहा कि सरकार और माओवादियों के बीच हुई इस सन्धि से नेपाल शान्ति और लोकतन्त्र की डगर पर आगे बढ़ सकेगा।

नेपाल ने विगत 240 वर्ष से चली आ रही राजशाही 28 मई, 2008 को समाप्त हो गई और नव निर्वाचित संविधान सभा ने देश को धर्मनिरपेक्ष संघीय लोकतान्त्रिक गणराज्य घोषित किया। संविधान सभा के इस निर्णय से नेपाल के महाराज का दर्जा आम नागरिकों के समान हो गया।

भारत के विदेश सचिव ने जनवरी, 2011 को नेपाल की यात्रा की। यात्रा के दौरान विदेश सचिव ने राजनीतिक पार्टियों के नेताओं से मुलाकात की। इन बैठकों में भारत और नेपाल के बीच द्विपक्षीय सम्बन्धों और दोनों देशों के बीच घनिष्ठ और बहुआयामी सम्बन्ध बढ़ाने एवम् उसे और सुदृढ़ करने पर जोर दिया। मुलाकात के दौरान इस बात पर जोर दिया कि भारत नेपाल को एक प्रजातान्त्रिक, स्थाई और समृद्धिशाली राष्ट्र के रूप में देखना चाहता है और उन्होने नेपाल में बहुपक्षीय प्रजातन्त्र को सुदृढ़ करते हुए तथा नेपाली नेतृत्व वाली शान्ति प्रक्रिया सफलतापूर्वक सम्पन्न करने के लिए भी संविधान के प्रारूप की प्रक्रिया में भारत की ओर से समर्थन देने का आश्वासन दिया।

दुर्भाग्य से नेपाल में लोकतान्त्रिक प्रक्रिया बहाल होने के बाद से राजनीतिक अस्थिरता का नया दौर आरम्भ हो गया। माओवादी नेता प्रचण्ड़ की महत्त्वाकांक्षा और नए नेपाली संविधान में मधेशी समुदाय को दोयम दर्जे की नागरिकता देने के कारण नेपाल में वर्ग संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई।

3.33 नेपाल सरकार के प्रति प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी का सद्भाव –

प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी ने 3–4 अगस्त, 2014 को नेपाल का अधिकारिक दौरा किया। मोदी ने नेपाल की सविधान सभा तथा विधायी संसद को सम्बोधित किया। मोदी पशुपतिनाथ मन्दिर भी गये और वहाँ मन्दिर को 2500 किलो चन्दन की लकड़ी उपहार में दी। अपनी यात्रा के दौरान मोदी ने काठमाण्डू–दिल्ली यात्री बस सेवा 'पशुपतिनाथ एक्सप्रेस' को हरी झण्डी दिखाकर रवाना किया। पनौती में प्रस्तावित राष्ट्रीय पुलिस अकादमी के निर्माण के लिए भारत सरकार ने 550 करोड़ भारतीय रूपये की लागत सहायता की जाएगी। प्रधानमन्त्री ने नेपाल सेना को एक उन्नत हल्का हेलीकॉप्टर मार्क–III सौपा। 25 अप्रेल, 2015 को नेपाल में आये भूकम्प के बाद भारत ने 'आपरेशन मैत्री' अभियान के अन्तर्गत तत्काल सहायता प्रदान की और हजारों लोगों तक राहत पहुँचाई। वर्ष 2018 में नेपाल प्रधानमंत्री के.पी.शर्मा ओली के भारत यात्रा के दौरान भारत ने वर्ष 2022 तक नई दिल्ली से काठमाण्डू रेल लिंक को शुरू करने पर सहमति व्यक्त की।

3.34 मधेशी आन्दोलन और भारत–नेपाल सम्बन्ध –

नेपाल के नेताओं ने भारत सरकार से विचार–विमर्श किए बिना नया संविधान तो लागू कर दिया लेकिन नये संविधान में मधेशियों की न्याय संगत माँगों को स्थान नहीं दिया गया। मधेश यानी नेपाल की पहाड़ियों और बिहार–उत्तर प्रदेश के मैदान के बीच पड़ने वाला तराई का क्षेत्र या मध्य देश है। सिर्फ 50 कि.मी. चौड़ी इस पट्टी में नेपाल की आधी आबादी बसती है। नेपाल का सबसे पिछड़ा, गरीब और उपेक्षित क्षेत्र है मधेश। नेपाल की सत्ता पहाड़ी, ब्राह्मण, क्षत्रिय और नेवाड़ी लोगों के हाथ रही है जबकि मधेश में भारतीय मूल के मैथिल, भोजपुरी और अवधि बोलने वाले पिछड़े और दलित समाज का प्रभुत्व है। नेपाल के सत्ताधारियों ने मधेशियों के साथ भेदभाव किया। नए संविधान में पहाड़ी नेताओं ने जनसंख्या के तर्क की उपेक्षा करते हुए संसद में अपने बहुमत को सुनिश्चित कर लिया। फलतः मधेशी नेताओं ने आर–पार की लड़ाई छेड़ दी। नेपाल सरकार ने मधेशी आन्दोलन का दमन किया और मानवाधिकारों का खुले तौर से हनन किया। इस पर मधेशियों ने ब्रह्मस्त्र का प्रयोग करते हुए भारत–नेपाल सीमा को बन्द कर दिया। चाहे अनजाने ही भारत सरकार को मधेशियों के साथ खड़ा होना पड़ा। पूरे नेपाल में पेट्रोल, गैस और दवाईयों का संकट हो गया..... सदियों पुराना भारत–नेपाल सम्बन्ध खतरे में हैं।

नेपाल सरकार ने अपने देश में पैट्रोलियम पदार्थों की किल्लत को देखते हुए आनन–फानन में चीन से नया समझौता कर लिया। मधेशियों के भारी विरोध और भारत से मिलने वाली सप्लाई को रोकने के बाद माओवादियों ने मधेशियों से नए समझौते कर उन्हें संसद, सरकार और अन्य स्थानों पर आगे बढ़ने का रास्ता अब खोल दिया है। उम्मीद है इससे नेपाल के हालात सुधरेंगें।

3.35 नेपाल–चीन पेट्रोलियम उत्पाद समझौता –

भारत से होने वाले पेट्रोलियम उत्पादों की सप्लाई में

भारी कमी आने के बाद नेपाल ने चीन का रूख कर लिया। नेपाल ने 28 अक्टूबर, 2015 को 'पेट्रो चाइना' के साथ दो समझौतो पर हस्ताक्षर किए। समझौते के अन्तर्गत नेपाल को चीन की ओर से 1000 मीट्रिक टन पेट्रोलियम उत्पादों तथा 13 लाख लीटर गैसोलिन की आपूर्ति की जाएगी। चीन हमारे सभी पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्ध बढ़ा रहा है। नेपाल में इस समय कम्युनिस्ट सरकार है, जिसका रूख चीन की तरफ ज्यादा है। नेपाल–चीन समझौता भारत सरकार के लिए भी खतरा है। सन् 2014 में जब मोदी नेपाल यात्रा पर गए थे, तब उन्होने सम्बन्धों को पटरी पर लौटाने के लिए हर सम्भव प्रयास का वादा किया था। नेपाल की जनता ने भी उनका जोरदार स्वागत किया, लेकिन इस समझौते ने साबित कर दिया है कि भारत को नेपाल नीति पर फिर से विचार करने की तत्काल आवश्यकता है।

3.36 भारत–नेपाल के बीच 9 समझौते –

फरवरी, 2016 नेपाल के प्रधानमन्त्री के.पी. शर्मा 'ओली' अपनी पहली विदेश यात्रा पर भारत आए। इसके साथ ही दोनों देशों के बीच कई महीनों से चली आ रही खटास दूर हुई है। दोनों देशों के प्रधानमन्त्रियों की उपस्थिति में सहयोग के 9 समझौतों पर भी दस्तखत हुए जिनके अन्तर्गत भारत द्वारा नेपाल की तराई में 518 किमी. की 17 सड़के बनाना भी शामिल है। ओली के त्यागपत्र के बाद पुनः प्रधानमन्त्री बने प्रचण्ड़ ने भी इसे दोहराया।

3.37 नेपाल का मनोविज्ञान –

नेपाल भारत के सन्दर्भ में जूनियर भागीदार के मनोविज्ञान से ग्रसित है तथा दक्षिण के पड़ोसी के आधिपत्य की आशंका का भूत उसे सताता रहता है। नेपाल भारत और चीन के साथ समदूरी सिद्धान्त के आधार पर सम्बन्ध विकसित करना चाहता है, जिससे चीन को भी सन्तुष्ट किया जा सके। परन्तु भारत समदूरी सिद्धान्त को नहीं मानता, वह तो नेपाल के साथ विशिष्ट सम्बन्ध चाहता है, उसका कहना है कि नेपाल एक आन्तरिक देश है अतः उसके साथ भारत के विशिष्ट सम्बन्ध रहना स्वाभाविक है।

3.38 नेपाल की भावी रणनीति (Future Strategy of Nepal) –

सन् 1950 में हुई सन्धि में एक बात यह भी कही गई थी कि नेपाल यदि हथियारों का कोई आयात करेगा तो भारत को सूचित करेगा। मूलतः यह प्रावधान इसलिए है कि नेपाल को हथियारों के आयात की आवश्यकताओं की भारत से ही पूर्ति की जा सके और उसे अपनी विदेशी मुद्रा इस पर खर्च न करनी पड़े, लेकिन नेपाल को लगता है कि यह हथियार आयात करने के उसकी सम्प्रभुता का हनन होता है। यह भी कहा जा रहा है कि सन् 1950 की सन्धि तत्कालीन विश्व परिस्थिति के सन्दर्भ में की गई थी, आज बहुत कुछ बदल चुका है। हाल ही में नेपाल ने भारतीय सीमा पर हुई आर्थिक नाकेबन्दी से सबक लेकर चीन से निकटता बढ़ानी शुरू कर दी है। नेपाल के पूर्व प्रधानमन्त्री के.पी. शर्मा 'ओली' ने चीन से आग्रह किया है कि नेपाल से तिब्बत होते हुए चीन तक रेल लाईन बनाए ताकि भारत पर उसकी निर्भरता कम हो सके। 20 मार्च, 2016 को चीन भी इस पर सहमत हो गया है। ओली के चीन दौरे के समय नेपाल और चीन ने रिश्ते मजबूत करने के लिए 10 समझौतों पर हस्ताक्षर किए हैं। इस प्रकार भारत–नेपाल सम्बन्ध भविष्य की नई इबारत रच रहे हैं, जिसके अवश्य ही दूरगामी परिणाम होंगें। यहाँ भारत को अब फूँक–फूँक कर कदम रखने की आवश्यकता है।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

- 14 अगस्त, 1947 तक भारत –पाकिस्तान व बांग्लादेश एक अविभाजित राज्य थे।
- भारत नेपाल के सम्बन्धों के खटास के कारण – 1950 की संधि व नदी जल विवाद है।
- भारत व चीन के मध्य विवाद का कारण तिब्बत समस्या व भौगोलिक सीमाएँ है।
- कश्मीर का विभाजन व उसके बाद की घटनाएँ भारत व पाक के बीच मन–मुटाव का कारण रही है।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. 1950 में नेपाल का कौनसा शासक भारत की शरण में आया –
   (अ) पृथ्वीनारायण शाह
   (ब) राजा त्रिभुवन
   (स) शमशेर बहादुर
   (द) गिरीजा प्रसाद कोईराला ( )
2. भारत चीन के बीच भौगोलिक सीमा का नाम है –
   (अ) मैकमोहन सीमा (ब) मनमोहन सीमा
   (स) तिब्बत सीमा (द) रेड क्लिप सीमा ( )
3. भारत चीन सम्बन्धों को मधुर बनाये रखने हेतु नेहरु जी ने कौनसे सिद्धान्त प्रतिपादित किए –
   (अ) शान्ति सिद्धान्त
   (ब) सीमा सिद्धान्त
   (स) पंचशील सिद्धान्त
   (द) गुट निरपेक्षता सिद्धान्त ( )
4. भारत पाक सम्बन्धों में तनाव का कारण है –

(अ) तिब्बत समस्या (ब) बांध की समस्या
(स) कश्मीर विवाद (द) अफगानिस्तान विवाद ( )

5. भारत संविधान की कौनसी धारा कश्मीर को विशेष दर्जा प्रदान करती है –
(अ) धारा 356 (ब) धारा 352
(स) धारा 360 (द) धारा 370 ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. पाकिस्तान अपना स्वतन्त्रता दिवस कब मनाता है?
2. भारत की सीमाओं से सटे देशों के नाम लिखिये।
3. भारत नेपाल के मध्य मशहूर सन्धि कब हुई थी?
4. आधुनिक नेपाल का संस्थापक किसे माना गया है?
5. 1959 में भारत ने किसे शरण दी थी, जिसे चीन ने शत्रुतापूर्ण कार्यवाही माना था?
6. चीन के हिस्से में ब्रह्मपुत्र नदी को क्या कहा जाता है?
7. प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी ने चीन की यात्रा कब की थी?
8. चीनी राष्ट्रपति जिनपिंग की सितम्बर 2014 में अहमदाबाद यात्रा में कितने समझौते किये गये थे?
9. कारगिल युद्ध में चीन का रवैया कैसा था?
10. पाकिस्तान आतंकवाद की गतिविधि पर कितनी राशि व्यय करता है?
11. भारत को अपनी सीमाओं की हिफाजत पर प्रतिवर्ष कितना धन खर्च करना पड़ता है?
12. पाकिस्तान ने कश्मीर में सर्वप्रथम किस दिन घुसपैठ की थी?
13. पाकिस्तान ने कश्मीर की कितनी भूमि पर कब्जा कर रखा है?
14. 1971 का युद्ध किस कारण हुआ।

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. भारत की उत्तरी पूर्वी सीमा पर नेपाल का क्या सामरिक महत्त्व है?
2. 1959 में चीन ने नेपाल के साथ क्या सन्धि की थी?
3. प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी ने नेपाल यात्रा में उन्हें क्या विश्वास दिलाया?
4. नेपाल की अर्थ–व्यवस्था में भारत का योगदान बताइए।
5. नेपाल में मधेशी आन्दोलन का मुख्य कारण क्या है?
6. गुजरात सरकार के साथ चीन ने कौनसे तीन समझौते किये थे?
7. भारत–चीन व्यापार पर लघु टिप्पणी लिखें।
8. चीन के साथ भारत के तीन प्रमुख विवाद क्या हैं?
9. चीन से तनाव के चलते रूस हमारा सहयोगी कैसे बना?
10. चीन भारत की सुरक्षा परिषद् की सदस्यता का समर्थन खुलकर क्यों नहीं कर रहा है?
11. ताशकन्द समझौते में क्या निश्चय किया गया था?
12. पाकिस्तान को आतंकवाद का गढ़ क्यों कहते हैं?
13. प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी ने पाकिस्तान से सम्बन्ध सुधारने के क्या उपाय किये हैं?
14. मुम्बई और पठानकोट हमलों के पीछे पाकिस्तान की क्या मंशा थी?
15. भारत ने पाकिस्तान में मानवाधिकार उल्लंघन पर क्या कार्यवाही की है?

निबन्धात्मक प्रश्न –

1. भारत–नेपाल सम्बन्धों का ताना–बाना बार–बार क्यों गड़बड़ा जाता है? दोनों देशों में तनाव के प्रमुख कारण क्या हैं?
2. भारत–नेपाल सम्बन्धों के बीच चीन की अभिरुचि को बाधक क्यों माना जाता है?चीन की नेपाल में विशेष रुचि क्यों है?
3. भारत–नेपाल रिश्तों पर आलोचनात्मक विवेचना कीजिए।
4. भारत–चीन सम्बन्धों का ऐतिहासिक आधार क्या है?वर्तमान में दोनों देशों के सम्बन्ध कैसे हैं?
5. भारत–चीन के आर्थिक रिश्तों से दोनों देशों की अर्थ–व्यवस्था को कैसे जोड़ा है?विस्तार से लिखिये।
6. भारतीय विदेश–नीति के प्रमुख घटक के रूप में चीन की क्या स्थिति है?
7. भारत–पाक सम्बन्धों की विपरीत धुरी है कश्मीर। इसे आधार बना कर लिखें कि कश्मीर में हालात पाकिस्तान की वजह से कैसे बिगड़े?
8. पाकिस्तान भारत को परेशान करने के उद्देश्य से हमारे अन्य पड़ोसियों से सम्बन्ध बढ़ा रहा है। इससे भारत पर क्या प्रभाव पड़ रहा है?
9. प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी की पाक विदेश नीति पर निबन्धात्मक लेख लिखिये।

बहुचयनात्मक प्रश्नों की उत्तरमाला

1. ब 2. अ 3. स 4. स 5. द

4. क्षेत्रीय संगठन – आसियान एवं सार्क
(Regional Organisations - ASEAN & SAARC)

आसियान
(ASEAN)

विश्व राजनीति में दक्षिण–पूर्वी एशिया सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। इस क्षेत्र में चीन के दक्षिण में तथा भारतीय उपमहाद्वीप के पूर्व में स्थित विभिन्न देश आते है। जिनमें म्यांमार, ब्रूनेई, थाईलैण्ड, इण्डोनेशिया, लाओस, मलेशिया, सिंगापुर, कम्पूचिया, वियतनाम, फिलिपीन्स आदि देश शामिल है। हाल ही में दक्षिण चीनी महासागर का विवाद इसी क्षेत्र के सामरिक हितों से जुड़ा हुआ है। यह क्षेत्र दूसरे विश्वयुद्ध के बाद से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बन गया है। विश्व राजनीति में 'दक्षिण पूर्वी एशिया' शब्द की उत्पति दूसरे विश्वयुद्ध के पश्चात् हुई है। सबसे पहले इस शब्द का प्रयोग एडमिरल माउण्टबैटन के नेतृत्व में दक्षिण पूर्वी एशिया कमाण्ड की स्थापना के दौरान 1953 में क्यूबेक सम्मेलन में किया गया है। वर्तमान में ये दस राष्ट्र इस क्षेत्र में स्थित है। दक्षिण पूर्वी एशिया सामरिक और भौगोलिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह हिन्द महासागर को प्रशान्त महासागर से मिलाने वाले समुद्री मार्ग पर स्थित है और एशिया व ऑस्ट्रेलिया को प्राकृतिक पुल के द्वारा आपस में जोड़ता है। उपजाऊपन में श्रेष्ठता के कारण इस क्षेत्र को 'एशिया का चावल का कटोरा' कहा जाता है। मलाया रबड़ उत्पादन में पूरी दुनिया में सबसे अग्रणी है। इण्डोनेशिया, सारावाक और उत्तरी ब्रूनेई प्रमुख तेल उत्पादक देशों में शामिल है। राजनीतिक दृष्टि से इस क्षेत्र के निकट स्थित साम्यवादी महाशक्ति चीन अपने प्रभाव को निरन्तर बढ़ाने के लिए अग्रसर है। वहीं अमेरीका के नेतृत्व में पश्चिमी देश चीन की साम्यवादी विचारधारा व उसके प्रभाव को रोकने के लिए प्रयत्नरत है। मूलतः इन सभी देशों में मंगोल नस्ल के लोग निवास करते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् तत्कालीन विश्व शक्ति ब्रिटेन की शक्ति के पराभव के उपरान्त यह क्षेत्र शक्ति शून्य हो गया और चीन इस शून्यता को भरने के प्रयास करने लगा। चीन की विस्तारवादी नीति के कारण दक्षिण पूर्वी एशिया के सभी छोटे–बड़े देश चीन के प्रति सशंकित रहने लगे। 1949 ई. में चीन में साम्यवादी शासन की स्थाापना हुई। जिसका प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष प्रभाव इस क्षेत्र पर पड़ा। इन देशों ने चीन की बढ़ती हुई विस्तारवादी एवं साम्राज्यवादी नीति के विरुद्ध तटस्थता का मार्ग अपनाते हुए आपसी सहयोग पर बल दिया। अन्ततः परस्पर आर्थिक सहयोग को गति प्रदान करने के लिए इन्होंने आसियान (ASEAN) अर्थात् दक्षिण पूर्वी एशियाई राष्ट्र संघ (Association of South East Asian Nations) नामक संगठन की स्थापना की।

4.1 आसियान का संगठन (Organisation of ASEAN) –

दक्षिण पूर्वी एशियाई राष्ट्र संघ (Association of South East Asian Nations) की स्थापना 8 अगस्त, 1967 में 5 देशों ने क्षेत्रीय सहयोग के उद्देश्य से असैनिक संगठन के रूप में की। इसके प्रारम्भिक सदस्यों में इण्डोनेशिया, मलेशिया, फिलिपीन्स, सिंगापुर तथा थाईलैण्ड शामिल थे। 1984 में ब्रूनेई भी आसियान का सदस्य बन गया। प्रारम्भ में वियतनाम, लाओस, कम्बोडिया तथा म्यांमार को प्रेक्षक का दर्जा दिया गया था। वियतनाम को 1995 में और कम्बोडिया को 30 अप्रैल, 1999 को आसियान का पूर्णकालिक सदस्य बना दिया गया। प्रारम्भ में भारत को भी आसियान का आंशिक सहयोगी बनाया गया। 24 जुलाई, 1996 में भारत को इसको 'पूर्ण संवाद सहभागी' बना दिया गया है। चीन और रुस को भी भारत के समान पूर्ण संवाद सहभागी बना दिया गया है। आसियान का सचिवालय जकार्ता (इण्डोनेशिया) में है और उसका अध्यक्ष महासचिव होता है। महासचिव दो वर्ष के लिए चुना जाता है। अब तक आसियान की सहयोगी संस्था एशियाई क्षेत्रीय फोरम (Asian Regional Forum - ARF) के अमेरीका, रुस, भारत, चीन, जापान और उत्तरी कोरिया सहित कुल 23 सदस्य है। आसियान का पहला शिखर सम्मेलन 1976 में बाली (इण्डोनेशिया) में आयोजित किया गया था और उसका 28वाँ व 29वाँ सम्मेलन वियनतियाने (लाओस) में 6 से 7 सितम्बर, 2016 को आयोजित किया गया।

4.2 आसियान की प्रकृति एवं उद्देश्य (Nature & Objectives of ASEAN) –

आसियान के दस सदस्य राष्ट्रों की अलग–अलग पृष्ठभूमि है। इन देशों की औपनिवेशिक विरासत, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक जीवन मूल्यों में भी अन्तर पाया जाता है, तथापि इन सभी देशों की कुछ चुनौतियाँ एक जैसी है और इन चुनौतियों का सामूहिक मुकाबला करने के लिए ही यह संगठन अस्तित्व में आया। इन देशों के समक्ष जनसंख्या विस्फोट, निर्धनता, आर्थिक शोषण, असुरक्षा आदि

की समान चुनौतियाँ है जिनका समाधान परस्पर क्षेत्रीय सहयोग से ही सम्भव है। आसियान के निर्माण का मुख्य उद्देश्य दक्षिण पूर्वी एशिया में आर्थिक प्रगति को गति प्रदान करना और सदस्य देशों की अर्थव्यवस्थाओं को स्थायित्व प्रदान करना है। सदस्य देशों में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, व्यापारिक, वैज्ञानिक, तकनीकी, प्रशासनिक आदि क्षेत्रों में परस्पर सहयोग करना एवं विभिन्न साझी समस्याओं का मिलकर समाधान ढूँढ़ना ही इस संगठन का उद्देश्य है। इस संगठन का एक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य ' साझा बाजार ' तैयार करना है और इन देशों के मध्य परस्पर व्यापार को बढ़ाना है। यह संगठन पूर्णतः आर्थिक सहयोग पर आधारित है और इसका स्वरूप कदापि सैनिक नहीं है। सदस्य राष्ट्र सामूहिक सुरक्षा जैसी शर्तों से नहीं बंधे हुए है, न ही यह संगठन किसी महाशक्ति के प्रभाव में कार्यरत है।

4.3 आसियान के कार्य एवं भूमिका (Role & Function of ASEAN) –

आसियान का कार्यक्षेत्र निरन्तर बढ़ रहा है। यह राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, तकनीकी तथा प्रशासनिक सभी क्षेत्रों में सक्रिय है। इसके सदस्य देश अपनी वैयक्तिक कार्यप्रणालियों को क्षेत्रीय आधार पर सुलझाने का प्रयास कर रहे है। 1969 में संचार व्यवस्था एवं सांस्कृतिक गतिविधियों को बढ़ाने के लिए इन देशों ने एक अनुबन्ध किया जिसके अन्तर्गत सभी देशों में रेडियो एवं दूरदर्शन के विभिन्न कार्यक्रमों का आदान–प्रदान किया जाना तय किया गया । पर्यटन के क्षेत्र में 'आसियण्टा' नामक सामूहिक संगठन की स्थापना की गई जो इन देशों में बिना किसी वीजा के परस्पर पर्यटन पर बल देता है। 1971 में हवाई सेवाओं के व्यापारिक अधिकारों की रक्षा एवं 1972 में फँसे हुए जहाजों को सहायता पहुँचाने से सम्बन्धित करार किए गए। आसियान द्वारा कृषि क्षेत्र में एवं खाद्यान्न के उत्पादन को प्राथमिकता देने के लिए किसानों को अर्वाचीन तकनीकी शिक्षा देने के ठोस कदम उठाये है। इसी तरह इन देशों में स्वतंत्र व्यापार क्षेत्र स्थापित करने के लिए भी प्रयास जारी है ताकि आपस में निर्यात–आयात सम्भव हो सके।

4.4 भारत और आसियान (India & ASEAN)–

भारत आसियान का पूर्ण संवाद सहयोगी देश है व आसियान के सहयोगी संगठन एशियाई क्षेत्रीय फोरम का भी सदस्य है। भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी अपनी 'एक्ट–ईस्ट' नीति के तहत दक्षिण पूर्व एशिया के देशों के साथ प्रगाढ़ता बढ़ाना चाहते हैं।

विगत 10 वर्षों में आसियान के साथ भारत का व्यापार बढ़कर पाँच गुणा हो चुका है। भारत की वर्तमान सरकार की "एक्ट ईस्ट नीति" को एशिया–प्रशान्त क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है।

आसियान क्षेत्र में बढ़ती हुई भूमिका के मुख्य रूप से तीन कारण है। पहला भारत को अपनी तेजी से उभरती अर्थव्यवस्था के लिए बाजार की आवश्यकता है। 'मेक इन इन्डिया' पहल के तहत भारत न केवल राष्ट्रीय अपितु बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को भारत में उत्पादन करने के लिए प्रोत्साहन दे रहा है। वियतमान और सिंगापुर ने प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में नवीन कीर्तिमान हासिल किए हैं। आसियान क्षेत्र विश्व की सातवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है जिसमें दुनिया की 200 बड़ी कम्पनियां स्थित है। जहाँ एक ओर भारत नये बाजार की तलाश में है वहीं आसियान देशों को भी अपने उत्पादों के लिए भारत के बाजार की आवश्यकता है।

दूसरा कारण, भारतीय अर्थव्यवस्था को न केवल बाजार की आवश्यकता है बल्कि तेल, प्राकृतिक गैस और ऊर्जा बाजारों की आवश्यकता है जो उसकी ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा कर सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आसियान सर्वाधिक उपयुक्त क्षेत्र है। भारत की कोयले की मांग इण्डोनिया से पूरी हो सकती है और गैस की वियतमान और ऑस्ट्रलिया।

तीसरा प्रमुख कारण भारत आसियान देशों के साथ प्रगाढ़ संबंध स्थापित करना चाहता है। भारत इन देशों में कूटनीतिक और आर्थिक जगह बनाना चाहता है जो अभी चीन के प्रभाव क्षेत्र में है। वियतमान, फिलीपीन्स के दक्षिण चीन सागर को लेकर चीन के साथ गम्भीर सामुद्रिक सीमा विवाद हैं और यह देश चीन की बढ़ती हुई शक्ति से आशंकित है। म्यानमार जो परम्परागत रूप से चीन से निकटता रखता था अब स्वतंत्र विदेश नीति का अनुसरण करना चाहता है। भारत बदली फिजां में म्यानमार से निकटता बनाना चाहता है।

प्रधानमंत्री 6 से 7 सितम्बर के मध्य लाओस की राजधानी वियंतियेन में 14वें आसियान भारत शिखर सम्मेलन को संबोधित करते हुए आतंकवाद और कट्टरवाद का मिलकर सामना करने पर बल दिया। उन्होंने आसियान भारत शिखर सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कहा कि आसियान भारत की ऐक्ट–ईस्ट पॉलिसी का केन्द्र है। आसियान इंडिया प्लान ऑफ ऐक्शन (2016–20) के तहत ऐक्टिविटिड को लागू किया जा चुका है। इसी सम्मेलन में नरेन्द्र मोदी ने पाकिस्तान को अलग–थलग करने के लिए उसे आतंकवाद का निर्यातक देश करार दिया और कहा कि जो देश आतंकवाद का निर्यात कर रहा है उसे सजा दी जानी चाहिए। नरेन्द्र मोदी ने आतंकवाद के खतरे को क्षेत्रीय सुरक्षा के लिए साझा खतरा बताते हुए आपसी सहयोग पर बल दिया। नरेन्द्र मोदी जापान सहित सभी दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों के साथ नये सिरे से व्यापार व सामरिक सम्बन्ध स्थापित करने पर बल दिया है।

4.5 आसियान का योगदान एवं समीक्षा (Appreciation & Contribution of ASEAN)–

आसियान की स्थापना से लेकर इसके 28वें शिखर

सम्मेलन तक के आसियान के सारे कार्यकलापों एवं उपलब्धियों का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि जिन उद्देश्यों के लिए आसियान की स्थापना की गई थी उनको पूरी तरह से प्राप्त नहीं किया जा सका है। आसियान यूरोपियन साझा बाजार की तरह सफल नहीं हो सका है। यह संगठन सदस्य राष्ट्रों में आर्थिक एवं अन्य प्रकार का सहयोग तीव्र गति से नहीं बढ़ा पाया है। आर्थिक सहयोग में आसियान की गति मन्द होने का कारण सदस्य राष्ट्रों के पास आवश्यक पूँजी एवं क्रय शक्ति का कम होना है। सदस्य राष्ट्रों के हितों में टकराव के कारण उनके बीच कई अन्तर्राष्ट्रीय विवाद भी उठे है। ऐसा प्रतीत होता है कि अधिकांश आसियान देशों का झुकाव पश्चिमी देशों की तरफ अधिक रहा है। इण्डोनेशिया के अतिरिक्त आसियान के अन्य सदस्य राष्ट्र मलेशिया, सिंगापुर, फिलिपीन्स एवं थाईलैण्ड पश्चिमी देशों के साथ सुरक्षात्मक समझौते से जुड़े है तथा उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के अनेक मुद्दों पर ही नहीं, बल्कि हिन्दचीन पर भी पश्चिमी शक्तियों का साथ दिया है। आसियान के सदस्य राष्ट्रों में विदेशी सैनिक अड्डे भी मौजूद है। इन सब आलोचनाओं के बावजूद आसियान एक असैनिक स्वरूप का संगठन है। आसियान की सदस्यता के द्वार दक्षिण–पूर्वी एशिया के उन सभी राष्ट्रों के लिए खुले हुए है जो इसके उद्देश्य, सिद्धान्त तथा प्रयोजनों में विश्वास रखते हैं। आसियान क्षेत्र को मुक्त व्यापार क्षेत्र बनाने के प्रयत्न क्षेत्रीय सहयोग की दिशा में महत्त्वपूर्ण चरण है। आसियान के महत्त्व को इस बात से आंका जा सकता है कि दुनिया के महत्त्वपूर्ण 23 देशों में जिनमें अमेरीका, रुस, जापान, चीन एवं भारत आदि शामिल है, वे इसकी 'एशियन रीजनल फोरम' के सदस्य है।

दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (SAARC-South Asian Association for Regional Cooperation)

दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग की दिशा में ऐतिहासिक कदम उठाते हुए 1985 में दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन की स्थापना की गई। उसकी स्थापना ढाका में हुई और उसका सचिवालय काठमांडू में स्थित है। मूलरूप से उसके सात सदस्य देश है – भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, श्रीलंका, भूटान तथा मालदीव। 3 अप्रैल 2007 को अफगानिस्तान दक्षेस का आठवाँ सदस्य देश बना। वर्तमान में इन आठ सदस्य देशों के अतिरिक्त पर्यवेक्षक भी शामिल है। दक्षेस की हिस्सेदारी विश्व जनसंख्या में 21 प्रतिशत क्षेत्रफल 3 प्रतिशत तथा वैश्विक अर्थव्यवस्था में 9.12 प्रतिशत है। दक्षेस स्वयं भी संयुक्त राष्ट्र संघ में एक पर्यवेक्षक है।

4.6 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background) –

दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय संगठन बनाने के प्रयास 1947 में नई दिल्ली में एशियाई सम्बन्ध सम्मलेन से ही प्रारम्भ हो गए थे। तत्पश्चात् फिलीपीस के बागुई सम्मेलन 1950 एवं 1954 के कोलंबो सम्मेलन में इस प्रक्रिया पर पुनः विचार–विमर्श हुआ।

पूरे दक्षिण एशिया का क्षेत्र राजनीतिक रूप से दो बड़े देश – भारत और पाकिस्तान के परस्पर तनाव के कारण व्यापक सहयोग को मूर्त रूप नहीं दे पाया। 1970 के दशक में ऐसे व्यापक क्षेत्रीय सहयोग की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। विश्व के अनेक क्षेत्रीय सहयोग संगठनों, विशेष रूप से दक्षिण पूर्व एशियाई सहयोग संगठन (ASEAN) की सफलता ने भी दक्षिण एशियाई देशों के नेतृत्व को उस ओर गम्भीरता से सोचने पर बाध्य किया। उस दिशा में प्रारम्भिक पहल करने का कार्य 1977 में बांग्लादेश के तत्कालीन प्रधानमंत्री जियाउर्रहमान अंसारी ने किया। तत्पश्चात् 1981 में कोलंबो में सात देशों के विदेश मंत्रियों ने बांग्लादेश के प्रस्ताव पर गहन विचार किया। बहुत चर्चा के पश्चात् क्षेत्रीय सहयोग के पाँच प्रमुख विषय निश्चित किए गए। 1983 में नई दिल्ली में सात देशों के विदेश मंत्रियों के सम्मेलन में इन पाँच विषयों – कृषि, ग्रामीण, विकास, दूरसंचार, मौसम विज्ञान तथा स्वास्थ्य एवं जनसंचार पर दक्षेस के घोषणा–पत्र को स्वीकार कर लिया गया। दक्षेस का प्रथम शिखर सम्मेलन 7–8 दिसम्बर 1985 को ढाका में सम्पन्न हुआ। अब तक कुल 18 शिखर सम्मेलन हो चुके है। इसका मुख्यालय काठमाण्डू (नेपाल) में है। इसकी स्थापना के समय विश्व राजनीति में सात पड़ौसी देशों (भारत, पाकिस्तान, नेपाल, बांग्लादेश, भूटान, श्रीलंका और मालदीव) के क्षेत्रीय सहयोग की शुरूआत हुई। सार्क का तेरहवां शिखर सम्मेलन (13–17 नवम्बर, 2005) ढाका में सम्पन्न हुआ।

4.7 सम्मेलन (Summits)–

1. 1985 – ढाका
2. 1986 – बेंगलुरु
3. 1987 – काठमांडू
4. 1988 – इस्लामाबाद
5. 1990 – माले
6. 1991 –कोलंबो
7. 1993 – ढाका
8. 1995 – नई दिल्ली
9. 1997 – माले
10. 1998 – कोंलबो
11. 2002 – काठमांडू
12. 2004 – इस्लामाबाद
13. 2005 – ढाका
14. 2007 – नई दिल्ली
15. 2008 – कोंलम्बो
16. 2010 – थिम्फू

17. 2011 – अड्डू
18. 2014 – काठमांडू
19. 2016 – इस्लामाबाद (प्रस्तावित) उड़ी आतंकवादी हमले के कारण भारत सहित अन्य सदस्य राष्ट्रों द्वारा बहिष्कार करने पर सम्पन्न नहीं हुआ है।

दक्षेस का 19वां शिखर सम्मेलन इस्लामाबाद पाकिस्तान में अक्टूबर 2016 में प्रस्तावित हुआ। परन्तु पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवादियों द्वारा भारत में लगातार हो रहे आतंकी गतिविधियों, कश्मीर के उड़ी सेना शिविर पर हुए हमले जिसमें 20 से अधिक भारतीय वीरगति को प्राप्त हुए और उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप भारतीय सेना द्वारा पाक अधिकृत कश्मीर के अंदर जाकर किए गए सर्जिकल स्ट्राइक के कारण उत्पन्न हुए तनाव में यह शिखर सम्मेलन रद्द करना पड़ा।

4.8 दक्षेस का चार्टर (Charter of SAARC)

दक्षेस के घोषणा–पत्र अथवा चार्टर जिस पर 1985 के ढाका सम्मेलन में सहमति बनी, में कुल दस धाराएँ है। इनमें सार्क के प्रमुख सिद्धान्तों, उद्देश्यों एवं संस्थागत संरचनाओं का उल्लेख किया गया है। अनुच्छेद एक में सार्क के प्रमुख उद्देश्यों का उल्लेख है।

1. दक्षिण एशिया में परस्पर सहयोग से आम जनता के कल्याण एवं जीवनस्तर में सुधार का प्रयास।
2. इस क्षेत्र में सामूहिक आत्मनिर्भरता का प्रयास।
3. आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सहयोग और विकास।
4. पारस्परिक विश्वास एवं समन्वय द्वारा समस्याओं का समाधान।
5. तकनीकी और वैज्ञानिक क्षेत्र में सहयोग।
6. अन्य विकासशील देशों के साथ सहयोग।
7. अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर आपसी सहयोग एवं एकजुटता।

अनुच्छेद दो में सार्क के मुख्य सिद्धान्तों का वर्णन है। इसके अन्तर्गत सहयोग, समानता, क्षेत्रीय अखंडता, परस्पर आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप इत्यादि शामिल है।

4.9 सांगठनिक ढांचा (Organisation)

- अनुच्छेद 3 में दक्षेस के राष्ट्राध्यक्षों के शिखर सम्मेलन का प्रावधान है।
- अनुच्छेद 4 में सदस्य देशों के विदेश मंत्रियों के परिषद् का प्रावधान है जिसकी वर्ष में दो बैठक आवश्यक है। अनुच्छेद 5 में एक स्थायी समिति का प्रावधान है जिसमें सदस्य देशों के विदेश सचिव शामिल होते हैं। इसकी वर्ष में एक बैठक अनिवार्य है और यह सहयोग के क्षेत्रों की पहचान और उसकी प्रगति की देखरेख का कार्य करती है।
- अनुच्छेद 6 में तकनीकी समितियों का प्रावधान है जो क्षेत्रीय सहयोग के नवीन विषयों और समन्वय का कार्य करते हैं।
- अनुच्छेद 7 में कार्यकारी समिति का प्रावधान है।
- अनुच्छेद 8 में दक्षेस सचिवालय का प्रावधान है जिसकी स्थापना 1987 में की गई और इसका मुख्यालय काठमांडू में है। एक महासचिव होता है जिसका कार्यकाल 2 वर्ष का होता है। सचिवालय के अतिरिक्त सहयोग के लिए 12 क्षेत्रीय केन्द्र विभिन्न सदस्य देशों में बनाए गए है। इसके अतिरिक्त अन्य सामाजिक, आर्थिक, और साहित्यिक सहयोग की दृष्टि से 6 अन्य उच्च स्तरीय संस्थाएँ और 17 मान्य संस्थाएँ भी अस्तित्व में है।
- अनुच्छेद 9 और 10 में दक्षेस के वित्तीय संस्थानों और अंशदानों का प्रावधान करता है।

दक्षिण एशिया मुक्त व्यापार क्षेत्र South Asian Free Trade Area (SAFTA)

दक्षिण एशियाई मुक्त व्यापार क्षेत्र की स्थापना पर सर्वप्रथम 1995 में दक्षेस मन्त्रिपरिषद् की बैठक में सहमति बनी। 1998 में दक्षेस के 10वें शिखर सम्मेलन में एक विशेषज्ञ समिति बनाने का निर्णय हुआ जिसका कार्य सॉफ्टा की पृष्ठभूमि बनाना था। अंततः 2004 में 12वें शिखर सम्मेलन में इस्लामाबाद में सॉफ्टा समझौते पर हस्ताक्षर किए गए और यह जनवरी 2006 से लागू हो गया। उस समझौते के अन्तर्गत दक्षेस के सदस्य राष्ट्रों से यह अपेक्षा थी कि वे 2009 तक अपने करों में 20 प्रतिशत तक की कमी करें परन्तु ऐसा पाकिस्तान की नीतियों के कारण संभव नहीं हो सका। दक्षेस राष्ट्रों के मध्य आपस का कुल व्यापार उन देशों की GDP के मात्र 1 प्रतिशत के आसपास ही है जबकि आसियान के राष्ट्रों के बीच यही 10 प्रतिशत तक है। यह सॉफ्टा की असफलता दक्षेस देशों के मध्य आर्थिक सहयोग की धीमी रफ्तार और परस्पर विश्वास के अभाव का ही द्योतक मान जा सकता है।

4.10 दक्षेस का मूल्याकंन और प्रासंगिकता (Appraisal & Relevance of SAARC) –

दक्षेस का घोषित उद्देश्य क्षेत्र को सामूहिक सहयोग के आधार पर सामाजिक–आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से विकसित करना है, परन्तु दक्षेस के देशों, विशेष रूप से भारत और पाकिस्तान के बीच जारी राजनीतिक विवादों ने उक्त सहयोग की प्रक्रिया को अत्यन्त धीमा कर दिया है। 1988 के इस्लामाबाद शिखर सम्मेलन में ही भारत आर्थिक सहयोग के बाधित विकास पर चिन्ता व्यक्त कर चुका है। पाकिस्तान और कुछ हद तक बांग्लादेश बड़े पैमाने पर आर्थिक सहयोग के विरोध में थे क्योंकि उन्हें भय था कि भारत की विशाल

अर्थव्यवस्था उनकी छोटी अर्थव्यवस्था को निगल लेगी। यद्यपि ऐसी आशंकाएँ आधारहीन ही थी। प्रारम्भिक वर्षों में केवल कृषि, संस्कृति और वैज्ञानिक क्षेत्रों में सहयोग आगे बढ़ पाया जो IPA अर्थात् एकीकृत कार्यक्रम में शामिल किए गए थे। राजनीतिक विवादों ने भी उस पारस्परिक सहयोग को बाधित किया है। कश्मीर, सीमापार आतंकवाद, चीनी हस्तक्षेप इत्यादि कई राजनीतिक विवादों ने दक्षेस को वर्तमान में लगभग अप्रासंगिक ही कर दिया है। गत कुछ वर्षों में म्यांमार के रखाईन प्रान्त से विस्थापित होकर बड़े पैमाने पर रोंहिग्या मुस्लिम समुदाय शरणार्थी के रूप में बांग्लादेश, भारत तथा अन्य दक्षिण एशियाई देशों में अवैध रूप से निवास करने लगे हैं। यह एक मानवीय त्रासदी के साथ–साथ आतंकी समस्या के माध्यम के रूप में भी उभरा है जिसकी पुष्टि भारतीय सुरक्षा ऐजेंसियों ने भी की है। इस विकट समस्या की चुनौति का भी दक्षेस को सामना करना पड़ रहा है। यद्यपि इसके बारे में कोई एकीकृत नीति नहीं बन पाई है। दक्षिण एशिया में एक प्रकार से भारत को कूटनीतिज्ञ स्तर पर विश्वव्यापी सफलताएँ मिली है। आर्थिक स्तर पर भारत की प्रशंसा हुई है और राजनीतिक स्तर पर भारतीय लोकतंत्र की सर्वत्र सराहना हुई है। इसलिए दक्षिण एशिया में इनका निर्णायक होना स्वाभाविक ही है। यदि दक्षेस में पाकिस्तान इस बात को स्वीकार नहीं करता तो संभवतः दक्षेस की प्रासंगिकता ही प्रश्नचिह्न के दायरे में होगी।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

- आसियान (ASEAN) की स्थापना पाँच देशों द्वारा 8 अगस्त 1967 में हुई
- आसियान (ASEAN) का पूरा नाम Association of South East-Asian Nation दक्षिण पूर्वी एशियाई राष्ट्र
- म्यांमार, ब्रुनेई, थाईलैण्ड, इण्डोनेशिया, लाओस, मलेशिया, सिंगापुर, कम्पुचिया, वियतनाम तथा फिलिपीन्स, आसियान के सदस्य है।
- भारत पूर्ण संवाद सहयोगी देश व एशियन रीजनल फोरम का सदस्य है।
- सार्क (SAARC) की स्थापना 1985 में दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन के रूप में हुई।
- सार्क के 8 सदस्य देश है – भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, श्रीलंका, भूटान, मालदीव एवं अफगानिस्तान।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. सार्क की स्थापना कब हुई –
   (अ) 1985 (ब) 1995
   (स) 2004 (द) 1947 ( )
2. सार्क का मुख्यालय किस शहर में है –
   (अ) ढाका (ब) कोलम्बो
   (स) काठमांडू (द) मुम्बई ( )
3. साफ्टा क्या है –
   (अ) दक्षिण एशिया मुक्त व्यापार क्षेत्र।
   (ब) दक्षिण एशिया मुक्त टेनिस एसोशियेसन।
   (स) संयुक्त राष्ट्र संघ की एक एजेन्सी।
   (द) इनमें से कोई नहीं। ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. SAARC का पूरा नाम लिखिए ?
2. SAFTA का पूरा नाम लिखिए ?
3. ASEAN का पूरा नाम लिखिए ?
4. आसियान की स्थापना कब हुई ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. आसियान के संगठन के बारे में बताइए।
2. आसियान के कार्य एवं भूमिका को समझाइए।
3. सार्क की स्थापना क्यों की गई ?
4. साफ्टा क्या है ?
5. सार्क सदस्य राष्ट्रो के नाम लिखिए।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. आसियान संगठन पर लेख लिखिए।
2. ' दक्षिण एशियाई राष्ट्रों के विचार–विमर्श का एक प्रमुख माध्यम है – सार्क ' इसके संगठनात्मक ढाँचे की पृष्ठभूमि में इस कथन की मीमांसा कीजिए।

बहुचयनात्मक प्रश्नों की उत्तरमाला

1. अ 2. स 3. अ